मुख्य परीक्षा विशेषांक भाग -1

TheCOREIAS

(Initiative of **gshindi.com**)

PAPER I

CALL/WHATSAPP/TELEGRAM

+918800141518

©thecorelas

प्रारंभिक परीक्षा 2018 सम्पन्न हो चूकी है ,आप सभी का ध्यान अब मुख्य परीक्षा पर केन्द्रित होगा |आप के मुख्य परीक्षा में समाचार पत्रों में आने वाले सम्पादकीय अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है |पर कई बार समस्या यह उत्पन्न होती है की अलग अलग अखबारों से इन सम्पादकीय खंड को कैसे पढ़ा जाये और उनका किस स्तर पर संकलन किया जाये |मुख्य परीक्षा में अलग अलग पेपर में हमे अलग अलग विचार को प्रश्नगत दर्शाना होता है ,जिसकी विस्तृत विवेचना हम "उत्तर लेखन " की कक्षा में करते है |आप सभी के लिए यह कतई संभव नहीं है की इन सभी सम्पादकीय को अलग अलग समाचार पत्रों से दिन प्रतिदिन पढ़ा जाये और उसका संकलन किया जा सके | हमने इन बातो को समझा और THE CORE IAS टीम द्वारा पुरे एक वर्ष के उन सम्पादकीय का संकलन किया गया है जो परीक्षा में आपके विचारो और ज्ञान को पुष्टता प्रदान करे| |हमने इस सम्पादकीय श्रृंखला को मुख्य परीक्षा के प्रश्न पत्र 1,2,3और 4 के अनुरूप संकलित किया है ताकि अध्यनरत अभ्यर्थियो जिन्हें मुख्य परीक्षा लिखनी है उनका समय और उर्जा दोनों को बचाया जा सके |

देश के प्रतिष्ठित दैनिक समाचार पत्रों के अलावा साप्ताहिक /पाक्षिक पत्रिका ,विभिन्न वेबसाइट /वेब पोर्टलो से हमने इन सम्पादकीय को संकलित किया है |पहली श्रृंखला में हम प्रश्न पत्र 1 के पाठ्यक्रम के अनुसार सम्पादकीय को प्रस्तुत कर रहे है जिनमे हमने कुछ प्रश्न भी शामिल किये है |हमारे कक्षा प्रोग्राम में सम्पादकीय आधारित उत्तर लेखन किया जाता है |बहुत जल्द ही हम इसका मॉडल उत्तर अपने वेबसाइट WWW.GSHINDI.COM//WWW.THECOREIAS.COM

के अतिरिक्त हमारे YOUTUBE CHANNEL THECOREIAS पर भी देख सकते है |विगत वर्षो से संघ लोक सेवा आयोग के प्रश्नों में काफी व्यापकता आयी है ,जो की सम्पादकीय की प्रासंगिकता को संदर्भित करती है |

हमने साप्ताहिक निबंध की खुली प्रतियोगिता का आयोजन अपने वेबसाइट के माध्यम से किया है| जिसमे उम्र और शैक्षणिक योग्यता की कोई बाध्यता नहीं है |अधिक जानकारी के लिए WWW.GSHINDI.COM//WWW.THECOREIAS.COM पर विजिट कर सकते है या फिर हमे WHATSAPP/TELEGRAM +918800141518 पर सन्देश भेज सकते है|

©thecoreias

INDEX	TOPIC
Sexual Harassment	1. यौन प्रताड़ना के मामलों से निपटने की कवायद 2. साख पर न आने पाये आंच 3. वैवाहिक दुष्कर्म : महिला अस्मिता का यक्ष प्रश्न 4. देश की हर चौथी महिला घरेलू हिंसा की शिकार: नैशनल फैमिली हेल्थ सर्व 5. भारत में घरेलू हिंसा (domestic violence in india) 6. केवल कठोर कानूनों से नहीं रुकेगा बाल यौन शोषण 7. देश में बलात्कार पीड़िताओं की चिकित्सा जांच के दौरान नियमों का पालन नहीं होता : रिपोर्ट
Population Issues	1. भारत में घटकर 2.2 हुई बच्चे पैदा होने की दर (TFR) 2. एकल पारिवारिक संरचना ने बच्चों को बुजुर्गों की गोद से वंचित कर दिया 3. पुरूषों के शहर की तरफ पलायन करने से कृषि में महिलाओं की हिस्सेदारी बढ़ी 4. देश में दो करोड़ से ज़्यादा बेटियां हैं जिन्हें उनके माता-पिता जन्म नहीं देना चाहते थे 5. अगले सात साल में हम जनसंख्या में दुनिया में नंबर एक हो जाएंगे 6.त्रासदी से कम नहीं बढ़ती आबादी 7. कम होती लड़कियां

	8. **सरकार मैरिटल रेप को अपराध मानने का विरोध क्यों कर रही है?**
Indian Society	1.**प्रवासी भारतीयों के माध्यम से भारतीय संस्कृति को विश्व स्तर पर फैलाने का कार्य** 2. **प्रवासी भारतीयों के माध्यम से भारतीय संस्कृति को विश्व स्तर पर फैलाने का कार्य** 3. **तनहा लोगों की सुध :Problem of elders-isolation** 4. **बच्चों में हिंसा का लावा क्यों फूट रहा है** 5. **देश में बेटियों की इच्छा रखने वाले स्त्री-पुरुषों की संख्या में वृद्धि** 6. **विरोधाभासों से भरा भारतीय समाज, गजब तरीके से हालात से सामंजस्य करने की क्षमता** 7. **मोबाइल की लत एक गंभीर स्वास्थ्य चुनौती बनती जा रही है** 8. **हिंसक व्यवहार** 9.**राह से भटकते युवा** 10. **जानलेवा खेल (Blue Whale)** 11. **पुरुषवादी मानसिकता बदलने की जरूरत** 12. **अदालती फैसलों का कितना असर: POCSO & IPC** 13. नाबालिग पत्नी के साथ सेक्स को बलात्कार ठहराने वाले फैसले का अमल में आना मुश्किल क्यों? **14. विवाद और सियासत** Padmavati

	Controversy 15. **अंतरजातीय शादियों में बढ़ोतरी: क्यों मुख्यधारा की राजनीति के चाहे बिना नहीं हो सकती** **16.महिला-पुरुष अंतर को पाटने के लिए तय करना होगा लंबा सफर** 18.**अंतरजातीय विवाह से मिटेंगे जातिगत पूर्वाग्रह**
GEOGRAPHY	1. **Himalaya से निकलने वाली 60 फीसदी जलधाराएं सूखने के कगार पर** 2. **दो अलग-अलग टाइम जोन** 3. **सतर्कता के संकेत:भूकंप** 4. **ग्रामीण विकास से मिटेगी भूख** 5.**शहर की समस्या और ग्रामीण विकास**
History	1. **ओडिशा का पाइका विद्रोह** 2. **आंदोलन जिसमें हर कोई नेता था : अगस्त क्रांति** **3.रूसी साम्यवादी क्रांति के १०० साल पूरे; जानते हैं इस क्रांति के वर्तमान प्रभाव**
Miscellaneous	1. .**आज अधिक प्रासंगिक हैं गांधी** 2. **स्वच्छ भारत एक बड़ी चुनौती**

THECOREIAS CLASSROOM PROGRAMME (Session 1) Mains QUESTION of Paper I

Q.1. यद्यपि मातृत्व लाभांश बिल महिलाओ के अधिकारों को विस्तार करने का एक सराहनीय कदम है परन्तु दीर्घ कल में यह महिलाओं के प्रति आर्थिक क्षेत्र में पक्षपात का सृजन करेगा, मुल्यांकन करे?

Q.2. सोशल मिडिया केवल अभिव्यक्ति का माध्यम के रूप में ही नहीं बल्कि बातचीत को धरातल पर उतरने का उपकरण भी हैं ,चर्चा करे?

Q.3. आर्थिक क्षेत्र में महिलाओं की कम भागीदारी के पीछे ऐतिहासिक और संरचनात्मक कारण है ,विश्लेषण करे?

Q.4 महिलाएं पितृसत्तात्मक समाज में अपराध को शांतिपूर्वक सहन कर रही है परन्तु हाल ही में उच्चतम न्यायालय द्वारा IPC की धारा 498A पर दिया गया निर्णय इस तथाकथित तथ्य के विपरीत मालूम होता है ,विशलेषण करिए?

Q.5 महिलाओ को उनके शारीर पर नियंत्रण करने का अधिकार तथा राज्य द्वारा लिंग परिक्षण निर्धारण के आधार पर भ्रूण हत्या एवं महिलाओ और अजन्मे भ्रूण के हित को ध्यान में रखकर ही गर्भपात सम्बन्धी कानून होना चाहिए ,इस सन्दर्भ में वर्तमान MTP एक्ट 1971 का समालोचनात्मक मूल्यांकन करे?

Q.6. रोबर्ट कलाइव ने ब्रिटिश राज की स्थापना की तथा लार्ड मैकाले ने उसके अंत के बीज बोये ? चर्चा करे ?

Q.7.महिला उद्धिमता को बढ़ावा देने के लिए किस तरह की विकास का मॉडल अपनाना चाहिए ?

Q.8.भारत में वर्तमान में जो न्यून महिला श्रम भागीदारी है वह और कम हो रही है ,क्या आप सहमत है ? और यह क्यूँ हो रहा है इसके बारे में विचार व्यक्त करे ?

Q.9.वर्तमान जनांकिकीय संक्रमण के लाभ को लेने के लिए आवश्यक है की महिलाओ की रोजगार में भागीदारी को बढ़ावा जाये ?

Q.10.श्रम बल में महिला भागीदारी को बढाने के लिए क्या सुधार की आवश्यकता है ?

Q.11.भारत में श्रम बल में महिला भागीदारी कम होने के क्या मुख्य कारण है ,सामाजिक पूर्वाग्रह पर चर्चा करे ?

Q.12 .भारत में परिवार नियोजन कार्यक्रम घृणास्पद, दुर्व्यवहार ,जाति और वर्ग के पूर्वाग्रह से ग्रस्त है ,सिद्ध करे ?

Q.13. भारत में परिवार नियोजन कार्यक्रम में व्यापक बदलाव की आवश्यकता पर विश्लेषण करे ? और इस सन्दर्भ में पुरुष नसबंदी को बढ़ावा देने के तरीको के लिए उपाय सुझाये और यह कैसे भारतीय सामाजिक संरचना से सम्बंधित होगा

Sexual Harrassment

1.अगले सात साल में हम जनसंख्या में दुनिया में नंबर एक हो जाएंगे यौन प्रताड़ना के मामलों से निपटने की कवायद

If India is found wanting, it is not for the lack of courage. There are strong sociological and cultural reasons why women are deterred from registering a complaint. This article discusses why no or less number of cases are registered

आखिरकार **'मी टू' अभियान** के चलते एक राजनेता को अमेरिकी सीनेट के चुनाव में हार का सामना करना पड़ा। रॉय मूर अल्बामा सीनेट सीट से रिपब्लिकन पार्टी के प्रत्याशी थे। परंतु किशोर उम्र की लड़कियों पर हमले और उनका पीछा करने के तमाम खुलासों के बाद उन्हें अपनी सीट गंवानी पड़ी। यौन शोषण के खुलासों से जुड़े 'मी टू' अभियान ने अब तक अनेक वरिष्ठ राजनेताओं, पत्रकारों और तमाम विचारधाराओं से जुड़े कलाकारों को प्रभावित किया है।

Problem in India and registration of cases

भारतीय बार महासंघ द्वारा इस वर्ष कराए गए एक सर्वेक्षण के मुताबिक भारत में **70** फीसदी महिलाएं इस डर से शिकायत नहीं करतीं कि उनके खिलाफ बदले की भावना से कार्रवाई की जाएगी। एक सच यह भी है कि वर्ष **2013** में कार्यस्थल पर यौन शोषण संबंधी नया कानून पारित होने के बाद मामलों का दर्ज होना बढ़ा है। अधिकांश संगठनों में औपचारिक शिकायत की प्रक्रिया को मानव संसाधन विभाग के स्तर पर ही रोक दिया जाता है। अगर आरोपित व्यक्ति अच्छा प्रदर्शन करने वाला व्यक्ति हुआ तो शायद ही शिकायत को औपचारिक रूप से दर्ज किया जाए। यौन शोषण शिकायत समिति का गठन अब कानूनन जरूरी है और उम्मीद की जाती है कि यह समस्या से निपटने में व्यवस्थागत प्रणाली अपनाएगी।

Big Hurdles?

- पहली बाधा: देश की एक तिहाई से ज्यादा कंपनियां मानती हैं कि उनके यहां आंतरिक शिकायत समिति नहीं है। हर चौथी बहुराष्ट्रीय कंपनी का भी यही मानना है। देश की आधी से अधिक कंपनियों का कहना है कि उनके यहां इन समितियों में काम करने के लिए प्रशिक्षित लोगों की कमी है।
- दूसरी बाधा: अनुक्रम व्यवस्था की दिक्कत भी बरकरार है। सन **1997** में जारी किए गए दिशानिर्देश और **2013** का कानून कहते हैं कि हर शिकायत समिति में एक बाहरी सदस्य, महिलाओं के लिए काम करने वाले एक स्वयंसेवी संगठन का सदस्य होना चाहिए। इसके पीछे विचार यह है कि स्वतंत्र सदस्य को एक प्रतिष्ठित व्यक्ति होना चाहिए जो निष्पक्ष मशविरा दे सके

Sexual harassment act and way around

- कंपनियों ने इस शर्त से बच निकलने का रास्ता भी निकाल लिया है। महिलाओं के खिलाफ अपराध पर शोध में विशेषज्ञता रखने वाली अनघा सरपोतदार इस बात को स्पष्ट करती हैं, 'कुछ ऐसे कदम

उठाए जाते हैं जिनकी मदद से इस प्रावधान को नाकाम किया जा सके। इसके तहत किसी भी अनुशासन में स्नातक की पढ़ाई करने वाले बच्चों को बाहरी सदस्य बना दिया जाता है। नियोक्ताओं के समक्ष एक सूची होती है जिसमें से वे बाहरी सदस्य का चयन कर सकते हैं।' वह कहती हैं कि नए आदमी की या गैर अनुभव व्यक्ति की मौजूदगी समिति की निष्पक्षता को प्रभावित कर सकती है। यह पूरी कवायद को सीमित करने वाली बात है।

- वर्ष 2013 के अधिनियम में एक संशोधन किया गया और आंतरिक शिकायत समिति को आंतरिक समिति में बदल दिया गया। अब इसके दायरे में परोक्ष शिकायतें भी शामिल हैं। अब यह समिति कार्यस्थल को महिलाओं के अनुकूल बनाने के लिए भी जवाबदेह हैं। यह कदम यकीनन अमेरिका की तुलना में भी प्रगतिशील है। अमेरिका के सामाजिक माहौल में भी पर्याप्त बदलाव आया है और वहां सार्वजनिक पदों पर बैठे पुरुष अब इसे महसूस कर रहे हैं। भारतीय समाज व्यापक तौर पर अभी उससे दूर है परंतु आशा है इसमें बहुत ज्यादा समय नहीं लगेगा।

2. साख पर न आने पाये आंच

Sexual Harassment Incidences

समाज के विभिन्न क्षेत्रों से कार्यस्थल पर यौन शोषण के बारे में अक्सर शिकायतें मिलती रहती हैं और ऐसी घटनाओं की रोकथाम तथा इनसे सख्ती से निपटने के लिये कानून भी है। लेकिन जब म.प्र. उच्च न्यायालय के प्रशासनिक न्यायाधीश के खिलाफ अधीनस्थ न्यायपालिका की महिला सदस्य ने ऐसे आरोप लगाते हुए 2014 में पद से इस्तीफा दिया तो निश्चित ही यह एक गंभीर मामला था। परंतु उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को पद से हटाने के लिये दायर याचिका में लगाये गये आरोपों की जांच के लिये गठित समिति ने जब यौन उत्पीड़न के आरोपों को सही नहीं पाया तो चर्चा होना स्वाभाविक है।

Problem in Judiciary

- वैसे तो उच्च न्यायालय से लेकर उच्चतम न्यायालय तक कई न्यायाधीशों के खिलाफ महाभियोग चलाने के प्रयास हो चुके हैं लेकिन संसदीय इतिहास में पहली बार 1993 में किसी न्यायाधीश को पद से हटाने के लिये लोकसभा में एक प्रस्ताव पेश किया गया था। यह मामला उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति वी. रामास्वामी का था, जिन्हें भ्रष्टाचार के आरोप में पद से हटाने की कार्यवाही लोकसभा में हुई लेकिन यह प्रस्ताव पारित नहीं हो सका। इसके बाद अगस्त 2011 में कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश सौमित्र सेन को भ्रष्टाचार के आरोप में पद से हटाने के लिये राज्यसभा में पहली बार ऐसे प्रस्ताव पर बहस हुई और यह पारित भी हो गया। लेकिन लोकसभा में इस पर चर्चा होने से पहले ही उन्होंने अपने पद से इस्तीफा दे दिया।
- इसी तरह, सिक्किम उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश पी. दिनाकरण को भी महाभियोग की कार्यवाही के माध्यम से पद से हटाने के लिये राज्यसभा के सभापति को याचिका दी गयी थी। इस मामले में आरोप भी निर्धारित हुए लेकिन उन्होंने जुलाई 2011 में पद से इस्तीफा दे दिया। इसके अलावा, तेलंगाना एवं आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के न्यायाधीश सी. वी. नागार्जुन रेड्डी पर निचली अदालत में एक दलित न्यायाधीश का उत्पीड़न करने और गुजरात उच्च न्यायालय के न्यायाधीश जे. बी. पार्दीवाला द्वारा अपने एक फैसले में की गयी टिप्पणी को लेकर उनके खिलाफ भी महाभियोग चलाने के अनुरोध के साथ राज्यसभा के सभापति के समक्ष याचिका दायर की जा चुकी है। हालांकि न्यायमूर्ति पार्दीवाला ने बाद में इस टिप्पणी को फैसले से हटा दिया।

न्यायपालिका में ही कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न की कथित घटना को लेकर राज्यसभा के सदस्यों ने अप्रैल, 2015 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के पीठासीन न्यायाधीश एस. के. गंगले पर महाभियोग चलाने के लिये याचिका दायर की थी। संविधान के प्रावधानों के तहत किसी न्यायाधीश को महाभियोग की प्रक्रिया के माध्यम से ही पद से हटाया जा सकता है। इसके लिये आवश्यक है कि पहले न्यायाधीश के खिलाफ आरोपों की जांच करायी जाये। फिर संबंधित सदन में उन्हें पद से हटाने की प्रक्रिया शुरू की जाये। राज्यसभा के तत्कालीन सभापति हामिद अंसारी ने प्रधान न्यायाधीश की सलाह से इस याचिका में लगाये गये आरोपों की जांच के लिये तीन सदस्यीय समिति गठित की। इस समिति की रिपोर्ट के आधार पर ही आगे कार्यवाही हो सकती है। यौन उत्पीड़न के आरोपों की जांच के लिये उच्चतम न्यायालय की न्यायाधीश आर. भानुमति की अध्यक्षता में तीन सदस्यीय समिति गठित की गयी थी। इस समिति को न्यायमूर्ति गंगले के खिलाफ चार आरोपों की जांच कर अपनी रिपोर्ट राज्यसभा को सौंपनी थी। समिति की रिपोर्ट पिछले महीने सदन के पटल पर रखी गयी, जिसके अनुसार आरोप संदेह से परे सही नहीं पाये गये। हां, न्यायाधीश के तबादले के संबंध में समिति ने कहा कि महिला न्यायाधीश का उनके पुत्र के 12वीं कक्षा के सत्र के बीच में तबादला नहीं किया जाना चाहिए था। दूसरी ओर सिर्फ जिला न्यायाधीश कमल सिंह ठाकुर की सिफारिश पर ऐसा करना न्यायोचित नहीं था।

समिति ने कहा कि उसकी राय में यह दण्डात्मक कदम था और चूंकि गलत कारणों से ऐसा किया गया था, इसलिए उनके पास इस्तीफा देने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। ऐसी स्थिति में न्याय के हित में होगा कि उसे फिर से सेवा में बहाल किया जाये, यदि वह इसके लिये तैयार हों। उच्चतर न्यायपालिका के सदस्यों पर भ्रष्टाचार, कदाचार, पद के दुरुपयोग या फिर कार्यस्थल पर यौन शोषण के आरोप लगने और इनके आधार पर ही उन्हें पद से हटाने के लिये लोकसभा अध्यक्ष अथवा राज्यसभा के सभापति के पास याचिका दायर होने से निश्चित ही न्यायपालिका की छवि पर असर पड़ता है। इस तरह के आरोपों और ऐसी कार्यवाही से बचने के उपाय पर विचार की आवश्यकता है। देश की जनता के प्रति न्यायपालिका के अटूट विश्वास को देखते हुए उम्मीद की जानी चाहिए कि उसे इस तरह के आरोपों का सामना नहीं करना पड़े।

3. वैवाहिक दुष्कर्म : महिला अस्मिता का यक्ष प्रश्न

दिल्ली उच्च न्यायालय ने वैवाहिक दुष्कर्म को अपराध की श्रेणी में शामिल करने के सबन्ध में टिप्पणी करते हुए कहा कि 'दण्डात्मक प्रावधान' के दुरुपयोग होने की आशंका पर वैवाहिक दुष्कर्म को अपराध की श्रेणी में नहीं लाना आधार नहीं हो सकता। केन्द्र सरकार का मानना है कि इससे विवाह संस्था भी ढह सकती है। क्या यह बेहतर नहीं होगा कि इस पर तटस्थ होकर गहन विमर्श किया जाए।

- किसी भी सामाजिक समस्या का हल सिर्फ कानूनवेत्ताओं के जरिए नहीं निकाला जा सकता। इसके लिए मनोवैज्ञानिकों एवं समाजशास्त्रियों की राय भी जरूरी है।
- वैवाहिक दुष्कर्म पर एक सिरे से राय बना लेना स्त्री-गरिमा के विरुद्ध होगा। उल्लेखनीय है कि न्यायालय में दायर याचिका में भारतीय दंण्ड संहिता की धारा 375 को चुनौती दी गई है जिसमें पति द्वारा अपनी पत्नी के जबरन शारीरिक संबंध को दुष्कर्म नहीं माना गया।

Some Fact:

- यूनाइटेड नेशंस पॉपुलेशन फंड द्वारा किए गए शोध के अनुसार भारत में 15 से 49 वर्ष की दो तिहाई से अधिक महिलाओं को पति द्वारा यौन उत्पीडऩ का शिकार होना पड़ता है।
- विश्व के 76 देशों में वैवाहिक दुष्कर्म को दंडनीय अपराध माना गया है जिसमें नेपाल भी शामिल है। इसलिए ये मान लेना कि यह पश्चिमी देशों की परंपरा है, गलत सिद्ध होता है।

क्या स्त्री का स्वयं की देह पर कोई अधिकार नहीं है और अगर है तो क्या उसे विवाह बंधन में बंधने के बाद यह निर्णय लेने का अधिकार नहीं कि वह बीमार या शारीरिक थकान से चूर होने की स्थिति में भी अपने पति से संबंध बनाने की अनिच्छा जाहिर कर सके? क्या किसी भी स्त्री के लिए ये सहज होगा कि अपने पति के साथ स्थापित संबंधों की खुले तौर पर शिकायत कर सके?

जिस देश में यौन दुष्कर्म को भी पुलिस थानों तक पहुंचाने में **'प्रतिष्ठा' की तमाम दुहाई अ**ड़चन बन जाती है और खामोश रहना बेहतर समझा जाता है वहां **वैवाहिक दुष्कर्म की झूठी शिकायत करना** सहज प्रतीत नहीं होता। अगर वैवाहिक दुष्कर्म को अपराध मान लिया जाए तो क्या विवाह बचा रह पायेगा? वैवाहिक दुष्कर्म को आपराधिक तथ्य घोषित करने और सजा का प्रावधान दूसरा चरण होना चाहिए।

आवश्यकता इस बात की ही है कि पत्नी इस तरह के कृत्य की शिकायत करे तो पति को परामर्श केन्द्र में ले जाने का प्रावधान हो। अगर फिर भी उसमें परिवर्तन न आए तो दंडात्मक कार्रवाई अवश्य होनी चाहिए। आवश्यकता इस बात की है कि वृहद स्तर पर सर्वेक्षण किया जाए और इस संबंध में महिलाओं की राय ली जाए बजाए इसके कि त्वरित निर्णय हो।

4.देश की हर चौथी महिला घरेलू हिंसा की शिकार: नैशनल फैमिली हेल्थ सर्व

मंत्रालय द्वारा कराये गये नैशनल फैमिली हेल्थ सर्वेक्षण **2015-16** के आंकड़ों को हाल ही में जारी किया गया. इस सर्वेक्षण रिपोर्ट में पाया गया कि देश में महिलाओं को अपने न्यूनतम अधिकारों के लिए काफी संघर्ष करना पड़ता है.

नैशनल फैमिली हेल्थ सर्वे **2015-16** में चिंता और चौंकाने वाले तथ्य सामने आए हैं. केंद्र सरकार यह सर्वेक्षण देश में महिलाओं के लिए कल्याणकारी योजनाओं को दिशा देने के लिए आयोजित करती है. शारीरिक संबंधों से जुड़े तथ्य**:**

- सर्वेक्षण के अनुसार अभी भी लगभग हर दूसरी लड़की की शादी **18** वर्ष की आयु से पहले हो रही है**,** जबकि परिवार की मर्जी के कारण **10** प्रतिशत लड़कियों को **13** वर्ष की आयु में शादी कर जबरन शारीरिक संबंध बनाने पड़ते है
- रिपोर्ट के अनुसार पहली बार सेक्स करने की औसत उम्र महिलाओं में **19.1** है. रिपोर्ट के अनुसार पिछले कुछ सालों में इस मोर्चे पर थोड़ा सुधार हुआ है लेकिन अभी भी हालत बहुत चिंताजनक है.
- शादी के उपरांत **70** प्रतिशत महिलाओं को अपनी मर्जी के बिना**,** अपने पति के कहे अनुसार सेक्स के लिए मजबूर होना पड़ता है.
- सेक्स समस्याओं को लेकर **70** प्रतिशत महिलाओं को ही अपने पति एवं परिवार से मारपीट का सामना करना पड़ता है.

घरेलू हिंसा से संबंधित तथ्य

- नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वेक्षण का सबसे हैरान करने वाला तथ्य यह है कि महिलाएं मानती हैं कि पतियों का उन्हें मारना ठीक है
- लगभग **52** प्रतिशत महिलाओं ने कहा कि वह पति की मार खाती हैं तो **42** फीसदी पुरुष मानते हैं कि वह सही करते हैं.
- पत्नी को पीटने के दो सबसे प्रमुख कारण हैं - ससुराल के लोगों की बातों को न मानना और सेक्स के लिए इनकार करना.
- रिपोर्ट के अनुसार देश में हर चौथी महिला घरेलू हिंसा की शिकार हो रही है.
- सर्वे के अनुसार हर दूसरी औरत को अपनी पसंद के अनुसार दूसरे पुरुष से बात करने का अधिकार नहीं है.
- लगभग **48** प्रतिशत महिलाओं ने माना कि उनके व्यवहार पर उनके पतियों का नियंत्रण है.
- जबकि **59** प्रतिशत महिलाओं ने कहा कि उन्हें घर से अकेले निकलने का अधिकार नहीं है.
- इससे भी चौंकाने वाला तथ्य इसमें यह था कि जितना समृद्ध परिवार**,** यह ट्रेंड उतना ही बढ़ा पाया गया.
- आर्थिक स्थिति से संबंधित आंकड़े
- सर्वेक्षण रिपोर्ट में पाया गया कि महिलाओं को अपने द्वारा ही कमाए हुए धन पर अधिकार नहीं मिलता.
- सर्वे में शामिल **55** प्रतिशत महिलाओं ने यह माना कि उन्हें अपने ही कमाए पैसे का खर्च करने या इस पर हक जताने का अधिकार नहीं है. यह आंकड़ा पिछले सर्वेक्षण में **52** प्रतिशत था

- आर्थिक मोर्चे पर महिलाओं की स्थिति और कमज़ोर हुई है जबकि नौकरीशुदा महिलाओं की संख्या में बढ़ोतरी दर्ज की गई है.

5. भारत में घरेलू हिंसा (domestic violence in india)

- भारत में घरेलू हिंसा एक बड़ी समस्या है. घर की बात घर के अंदर रखने की आम प्रवृत्ति के बावजूद अलग-अलग रिसर्च और स्टडी से पता चलता है कि अमूमन हर तीसरी विवाहित महिला के साथ पति ने शारीरिक हिंसा की है. कुछ रिसर्च में ये आंकड़ा **50** फीसदी तक है.
- नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वे के आंकड़ों के मुताबिक भारत की **28** फीसदी से ज्यादा महिलाओं ने घरेलू हिंसा की शिकायत की है.
- ये हिंसा कई बार मानसिक उत्पीड़न की शक्ल में भी होती है. स्त्री को घर से निकलने की इजाजत न देना या उसे खाना खाने न देना**,** या उसकी मर्जी के खिलाफ सेक्स करना भी हिंसा के ही फॉर्म हैं. पत्नी को उसकी मर्जी के बगैर छोड़ देना या छोड़ने की धमकी देना भी घरेलू हिंसा है.
- परिवार और खासकर विवाह संस्था के अंदर स्त्रियों के खिलाफ हिंसा का एक नया कारण हाल के सालों में सामने आया है. आंकड़ों से ये बात साबित हो रही है कि अगर पत्नी के पास मकान या जमीन नहीं है**,** तो उसके खिलाफ हिंसा होने की आशंका कई गुना बढ़ जाती है. इसका मतलब ये भी है कि अगर पत्नी के पास मकान और जमीन है**,** तो उसके खिलाफ हिंसा या तो नहीं होगी या कम होगी.

Turning Promises in to action : Gender equality in 2030 agenda' report

- हाल ही में संयुक्त राष्ट्र संघ की **'Turning Promises in to action : Gender equality in 2030 agenda'** नाम की एक रिपोर्ट आई है.
- इसके अनुसार देश में दलित वर्ग की महिलाओं की औसत उम्र ऊंची जाति की महिलाओं की तुलना में **14.6** साल कम है. रिपोर्ट के मुताबिक कमजोर साफ-सफाई**,** पानी की अपर्याप्त आपूर्ति और स्वास्थ्य सेवाओं की कमी जैसी वजहों के कारण जाति का भेद और भी ज्यादा गहरा जाता है.
- रिपोर्ट में यह भी सामने आया है कि सामान्य आर्थिक स्थिति वाले घरों में महिलाओं का **12** प्रतिशत समय**,** पानी और जलावन का इंतजाम करने में ही निकल जाता है. जबकि गरीब और दलित महिलाओं को इसी काम में दोगुना यानी **24** प्रतिशत समय लग जाता है. यानी सामान्य वर्ग की महिलाओं की तो हालत खराब है ही**,** दलित और गरीब वर्ग की महिलाओं के मामले में हाल और बुरा हो जाता है. उदाहरण के तौर पर स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच के मामले में दलित और गरीब महिलाएं हमारे यहां सबसे नीचे पायदान पर हैं. वैसे इस मामले में खाते-पीते घरों की स्थिति भी बस गरीब परिवार के पुरुषों के बराबर ही है.
- शिक्षा के क्षेत्र की बात करें तो भारत में पुरुषों की साक्षरता दर **85** प्रतिशत है और महिलाओं की सिर्फ **65** प्रतिशत. लेकिन दलित महिलाओं की शिक्षा दर इससे भी आठ प्रतिशत कम यानी **57** प्रतिशत ही है. रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि भारत में महिलाओं की शिक्षा और सामाजिक व्यवस्था में उनकी हैसियत ही यह भी तय करती है कि कार्यस्थल पर उनका कितना शोषण हो सकता है.

- समाजशास्त्रियों का कहना है कि भारतीय समाज में आज भी पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं की स्थिति दोयम दर्जे की है.
- यह फर्क खाने-पीने से लेकर शिक्षा**,** चिकित्सा**,** बुनियादी सुविधाओं और व्यक्तिगत आजादी तक हर क्षेत्र में देखा जा सकता है. घरों में खाने की ज्यादा मात्रा और पौष्टिक चीजें सिर्फ पुरुषों को ही दी जाती हैं. यहां तक कि घर में खाने के लिए उपलब्ध हर चीज पर पहला हक पुरुषों का ही होता है. महिलाओं को अक्सर बचे हुए खाने में ही काम चलाना होता है. यही वजह है कि शरीर की पौष्टिकता की जरूरतें सारी जिंदगी ही पूरी नहीं हो पातीं. इस कारण शरीर कमजोर ही रहता है और जल्दी-जल्दी बीमारियों की चपेट में आता है.
- हमारे समाज में अक्सर ही महिलाओं की बीमारियों की लंबे समय तक पूरी तक अनदेखी की जाती है. वे किसी तरह बिना डॉक्टर के पास जाए ही ठीक हो जाएं या काम चल जाए**,** इस बात का ही इंतजार किया जाता है. इस कारण अक्सर ही साध्य बीमारी भी सही समय पर इलाज न होने से लाइलाज बन जाती हैं. कभी-कभी टीबी जैसी साध्य बीमारी भी महिलाओं की मौत का कारण बन जाती है. ये सारी स्थितियां वैसे सामान्य महिलाओं पर भी लागू होती हैं, लेकिन दलित और वंचित तबके की महिलाओं के मामले में स्थिति और भी खराब हो जाती है क्योंकि पहले ही इस तबके तक खाने, साफ पानी और चिकित्सा की बुनियादी सुविधाएं सबसे कम पहुंचती हैं. और जितनी पहुंचती हैं, उनमें से भी बची-खुची ही दलित महिलाओं तक पहुंचती हैं.
- पारिवारिक उपेक्षा के साथ-साथ दलित महिलाएं सीधे तौर पर भी सामाजिक हिंसा के निशाने पर भी सबसे ऊपर होती हैं. एक तरफ वे सार्वजनिक रूप से सीधे तौर पर यौन शोषण और अपमान की सबसे ज्यादा शिकार होती हैं. दूसरी तरफ सामाजिक उपेक्षा और अपमान सहने के कारण अक्सर ही दलित पुरुष ज्यादा कुंठाग्रस्त रहते हैं. यह कुंठा भी दलित महिलाओं के खिलाफ शारीरिक और मानसिक घरेलू हिंसा का कारण बनती हैं. आंकड़े भी इस बात की पुष्टि करते हैं. नेशनल क्राइम रिकार्ड ब्यूरो के अनुसार पिछले एक साल में घरेलू हिंसा के जो मामले दर्ज किए गए उनमें दलित महिलाओं से जुड़े मामलों की हिस्सेदारी सबसे ज्यादा (24.6 प्रतिशत) है. जानकारों के मुताबिक यह दोहरी हिंसा, उपेक्षा, अपमान और घोर अभाव आदि सब मिलकर दलित महिलाओं की उम्र कम करने का एक अहम कारण बन जाते हैं.
- दलित महिलाओं की उम्र अन्य महिलाओं की औसत उम्र से कम होने का मामला असल में जहां एक तरफ जाति व्यवस्था के बुरे परिणाम का मसला है, वहीं दूसरी तरफ यह लिंगभेद से भी गहराई से जुड़ा है. इंटरनेशनल दलित सॉलिडैरिटी नेटवर्क ने दलित स्त्रियों से जुड़ी हिंसा को नौ हिस्सों में बांटा था. इनमें से छह जाति आधारित पहचान के कारण होती हैं और तीन लिंगभेद के चलते. जाति के चलते पर जहां दलित महिलाओं को यौन हिंसा, गाली-गलौज, मारपीट, अन्य तरह के हमलों का शिकार होना पड़ता है. दूसरी तरफ, लिंगभेद के कारण उन्हें कन्या भ्रूण हत्या, घरेलू हिंसा और कम उम्र में विवाह के कारण होने वाले कई स्तरों के अत्याचार झेलने पड़ते हैं.
- लिंगभेद के कारण हमारे समाज में महिलाओं की शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक स्थिति पुरुषों की अपेक्षा काफी दोयम दर्जे की है. ऐसे में जाति व्यवस्था के कारण जो तबका सामाजिक रूप से और भी ज्यादा वंचित स्थिति में है, वहां की महिलाओं के लिए यह उपेक्षा बढ़कर चौहरी हो जाती है. जानकारों का मानना है कि समाज में लैंगिक (जेंडर) संवेदनशीलता बढ़ाने और जातिवाद को घटाने की सख्त जरूरत है. उसके बिना कितनी भी ऊंची विकास दर महिलाओं के जीवन में सकारात्मक बदलाव नहीं ला सकेगी.

6. केवल कठोर कानूनों से नहीं रुकेगा बाल यौन शोषण

Recent context

दिल्ली के तैमूर नगर में एक 13 वर्षीय बच्ची अपने घर के बिल्कुल बगल में स्थित दुकान से आईसक्रीम खरीदने गई जहां से उसका अपहरण करने के बाद 12 से 13 लोगों ने उसका बलात्कार किया और जब सेना में ड्राइवर उसके पिता ने गुप्तचरों की सहायता से उसकी खोज पर भारी रकम खर्च करके उसे तलाशा उस समय वह बच्ची 3 महीने की गर्भवती थी। एक अन्य मामले में शुक्रवार को एक 11 वर्षीय बच्ची से एक पार्क में एक 40 वर्षीय डॉग ट्रेनर ने बलात्कार कर डाला। यह सोचना कि यह सब केवल लड़कियों तक ही सीमित है बिल्कुल गलत होगा। हाल ही में अपने घर के सामने स्थित पार्क में शाम के समय झूलों पर खेल रहे 2 बच्चों का अपहरण कर लिया गया और उनसे कुकर्म करने के बाद उन्हें खेल के मैदान में ही निर्वस्त्र छोड़ कर अपराधी भाग गए।

TheCOREIAS TEST SERIES (Both Hindi & English Medium)

- GS TEST Series
- Geography Optional
- History Optional
- Hindi
- Essay

This forces us to think

जब महिलाओं से बलात्कार होते हैं तो हम एक लम्बी खामोशी ओढ़ लेते हैं या एक-दूसरे पर दोषारोपण का खेल शुरू कर देते हैं जिसकी समाप्ति पीड़िता के परिधान या उस मनहूस घड़ी या उसके द्वारा स्थान के चुनाव पर ठीकरा फोड़ देने से होती है लेकिन जहां छोटे बच्चों का संबंध हो क्या भारतीय समाज ऐसा ही करेगा?

Reporting of cases?

शायद अब यह अपरिहार्य हो गया है कि बच्चों को अकेला न छोड़ा जाए और जब भी वे खेलने या पास-पड़ोस में सामान आदि लेने जाएं तो उनके साथ माता या पिता में से कोई उसके साथ अवश्य हो। यहां तक कि बच्चों के साथ जाने वाले नौकर और नौकरानियां भी सदा भरोसेमंद सिद्ध नहीं हो सकते हैं। हालांकि सरकार ने बाल अश्लीलता **(चाइल्ड पोर्नोग्राफी)** तथा भारत में बच्चों के ऑनलाइन दैहिक शोषण की समस्याओं से निपटने के लिए **इंटरपोल और इंटरनैट वाच फाऊंडेशन (आई.डब्ल्यू.एफ.)** जैसी अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के साथ हाथ मिलाया है और अभी तक 3522 ऐसी साइटें पिछले 4महीनों में सुप्रीमकोर्ट के आदेश के बाद बंद भी की जा चुकी हैं, परंतु समाज में मौजूद 'बाल उत्पीड़क' अक्सर परिवार तथा मित्रमंडली के भीतर ही मौजूद होते हैं। हालांकि 2012 के बाल संरक्षण अधिनियम में कठोर सजाओं का प्रावधान है परन्तु अधिकतर अभिभावक पुलिस के पास रिपोर्ट ही नहीं करते।

7. देश में बलात्कार पीड़िताओं की चिकित्सा जांच के दौरान नियमों का पालन नहीं होता : रिपोर्ट

सामाजिक कार्यकर्ता लंबे अरसे से दावा करते रहे हैं कि देश में बलात्कार की शिकार बनी महिलाओं की चिकित्सा जांच निर्धारित दिशा-निर्देशों के अनुरूप नहीं की जाती. अब यह बात कानून मंत्रालय और संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यूएनडीपी) की मदद से एनजीओ 'पार्टनर्स फॉर लॉ इन डेवलेपमेंट' द्वारा किए गए एक अध्ययन से भी साबित हुई है. इसके लिए दिल्ली स्थित चार फास्टट्रैक कोर्ट में चल रहे 16 मामलों का अध्ययन किया गया था. इस अध्ययन से जुड़ी रिपोर्ट बताती है कि:

- आमतौर पर बलात्कार पीड़िताओं से जांच की सहमति लिए बिना ही उनके हस्ताक्षर या अंगूठे के निशान ले लिए जाते हैं.
- कुछ पीड़िताओं को प्राथमिकी (एफआईआर) दायर कराने के दौरान पुलिस उत्पीड़न का भी सामना करना पड़ता है.
- रिपोर्ट के मुताबिक प्रभावित महिलाओं को एफआईआर की कॉपी हासिल करने के लिए भी पुलिस के चक्कर लगाने पड़ते हैं.

Recommendations:
इस रिपोर्ट में बलात्कार पीड़िताओं के अधिकार और सुरक्षा के लिए कुछ सिफारिशें भी की गई हैं. इनमें चिकित्सा जांच करने के लिये स्वास्थ्य कर्मियों को समुचित प्रशिक्षण प्रदान करना और पीड़िता के साथ

उनके परिजनों को सुरक्षा देना शामिल है. इसके साथ ही पीड़िता के केवल उन्हीं कपड़ों को जांच के लिये भेजने की सिफारिश की गई है, जो उस अपराध से जुड़े हों

8.सरकार मैरिटल रेप को अपराध मानने का विरोध क्यों कर रही है?

Why government is opposing to consider marital rape as crime?

केंद्र सरकार का मानना है कि महिला को अपने पति को 'न' कहने का अधिकार नहीं दिया जा सकता. लिहाजा पत्नी के न कहने के बावजूद अगर उसका पति उसके साथ जबरदस्ती करता है तो उसेबलात्कार नहीं माना जाएगा. केंद्र सरकार के इस रुख से 'वैवाहिक बलात्कार' यानी 'मैरिटल रेप' एक बार फिर से देश भर में चर्चा का मुद्दा बन गया है. इस मुद्दे से जुड़े तमाम पहलुओं को समझने सेपहले जानते हैं कि मैरिटल रेप क्या है और हमारे देश के मौजूदा कानून इस बारे में क्या कहते हैं.

Is there any definition of Marital rape in India?

- मैरिटल रेप हमारे देश के कानूनों में कहीं भी परिभाषित नहीं है. दुनिया के जिन देशों में मैरिटल रेप को अपराध माना जाता है वहां इसका सीधा-सा मतलब है कि कोई भी व्यक्ति अपनी पत्नी कीइच्छा के विरुद्ध या उसकी अनुमति के बिना, जबरन उससे शारीरिक संबंध नहीं बना सकता. और यदि कोई ऐसा करता है तो उसे बलात्कार का दोषी माना जाएगा.
- लेकिन हमारे देश में ऐसा इसलिए नहीं है क्योंकि भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) की धारा 375 - जिसमें रेप यानी बलात्कार की परिभाषा दी गई है - उसमें एक अपवाद भी शामिल है. यह अपवादकहता है कि अगर पत्नी की उम्र 15 साल से कम नहीं है तो उसके पति द्वारा उसके साथ बनाए गए किसी भी तरह के यौन संबंधों को बलात्कार नहीं माना जाएगा. यही अपवाद हमारे देश में मैरिटलरेप को अपराध की श्रेणी से बाहर कर देता है.

Conntrdiction in our laws

- हमारे कानूनों में सिर्फ एक ही परिस्थिति में पत्नी के साथ जबरन बनाए गए संबंधों को अपराध माना गया है.
- आईपीसी की धारा 376बी के अनुसार अगर कोई पत्नी अपने पति से अलग रहने लगी हो, तब उसके साथ जबरन यौन संबंध बनाने पर पति को सजा हो सकती है. लेकिन इसे भी बलात्कार नहीं मानागया है और इस अपराध के लिए सजा भी बलात्कार की तुलना में काफी कम है
- इस प्रावधान के अनुसार दोषी को न्यूनतम दो साल और अधिकतम सात साल तक की सजा हो सकती है, जबकि बलात्कार के मामलों में न्यूनतम सजा ही सात साल और अधिकतम सजा उम्र कैद तक है.

इन्हीं विरोधाभासों के चलते दिल्ली उच्च न्यायालय में कुछ याचिकाएं दाखिल की गई हैं. इन याचिकाओं में मांग की गई है कि मैरिटल रेप को अपराध घोषित किया जाए और इसे उतना ही गंभीर मानाजाए जितना कि बलात्कार को माना जाता है. इन याचिकाओं पर सुनवाई करते हुए न्यायालय ने केंद्र सरकार से भी जवाब मांगा था. इस पर केंद्र ने शपथपत्र दाखिल करते हुए न्यायालय को बताया किमैरिटल रेप को अपराध नहीं माना जा सकता. लेकिन इसके लिए केंद्र ने जो आधार बताए हैं, वे सही नहीं कहे जा सकते.

मैरिटल रेप पर केंद्र सरकार का रुख

केंद्र सरकार ने मुख्यतः दो कारणों से मैरिटल रेप को अपराध मानने से इनकार किया है:

- ऐसा करने से 'विवाह की संस्था अस्थिर' हो सकती है. यह बिलकुल वैसा ही तर्क है जैसा कुछ दशक पहले हिंदू धार्मिक कानूनों में सुधार के दौरान दिया जाता था. इस्लाम या ईसाई धर्म की तरह हिंदूधर्म में शादी को कॉन्ट्रेक्ट नहीं माना गया है. हिंदू धर्म के अनुसार विवाह एक संस्कार है और यह जन्म-जमांतर का अटूट रिश्ता होता है. लिहाजा हिंदू धर्म में तलाक का कोई प्रावधान नहीं था. ऐसे में जब हिंदू धार्मिक कानूनों में सुधार होने लगे और तलाक का प्रावधान बनाया गया
- इसके दुरुपयोग की संभावनाएं बहुत ज्यादा हैं. सरकार ने दहेज़ उत्पीड़न के लिए बने कानून और विशेष तौर से आईपीसी की धारा 498ए (पति या उसके रिश्तेदारों द्वारा उत्पीड़न किया जाना) काहवाला देते हुए कहा है कि मैरिटल रेप को अगर अपराध घोषित किया जाता है तो उसका दुरुपयोग भी 498ए की तरह होने लगेगा.

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि धारा 498ए का दुरुपयोग भी हुआ है. इसी कारण अब सर्वोच्च न्यायालय ने इस तरह के मामलों में पति और उसके रिश्तेदारों की गिरफ्तारी पर रोक लगानेके साथ ही यह भी निर्देश जारी कर दिए हैं कि इस धारा के तहत मामला दर्ज होने से पहले एक स्थानीय समिति मामले की जांच करेगी. ऐसा होने से 498ए के झूठे मामलों पर रोक भी लगी है और सच मेंपीड़ित महिलाओं को न्याय मिलने का विकल्प भी बना हुआ है. ऐसा ही मैरिटल रेप के मामले में भी हो सकता है. कानून के जानकारों का मानना है कि दुरुपयोग का खतरा हर कानून में ही होता है. झूठे आरोप किसी भी अपराध के लगाए जा सकते हैं फिर चाहे वह चोरी हो, लूट हो या बलात्कार हो. इससे निपटनेके लिए सरकार को अलग से व्यवस्थाएं मजबूत करनी चाहिए. लेकिन दुरुपयोग की संभावना के डर से कानून ही न बनाए जाने को कई जानकार बिलकुल गलत और अतार्किक मानते हैं. कुछ आंकड़ोंके अनुसार देशभर में दस प्रतिशत से ज्यादा महिलाएं वैवाहिक जीवन में यौन हिंसा और बलात्कार का शिकार होती हैं. यह अपने-आप में बहुत बड़ा आंकड़ा है. इसलिए कई जानकारों और महिलाअधिकार कार्यकर्ताओं का मानना है कि सिर्फ दुरुपयोग की संभावना के चलते मैरिटल रेप की असल पीड़ितों को बिना कोई कानूनी विकल्प दिए नहीं छोड़ा जा सकता.

मौजूदा कानून में यौन हिंसा से पीड़ित पत्नियों के पास क्या विकल्प हैं?

- ऐसा नहीं है कि मौजूदा कानून में यौन हिंसा से पीड़ित पत्नियों के पास कोई विकल्प ही न हों. भले ही ये विकल्प उतने मजबूत नहीं हैं जितना कि मैरिटल रेप को अपराध मान लिए जाने से हो सकते हैं,लेकिन कुछ विकल्प आज भी महिलाओं के पास हैं.
- यदि कोई महिला अपने पति से अलग रहने लगे और तब उसका पति उसके साथ जबरन यौन संबंध बनाए तो वह महिला आईपीसी की धारा 376बी के तहत अपने पति पर मुकदमा कर सकती है.इस धारा के अंतर्गत दोषी को सात साल तक की सजा हो सकती है. लेकिन इस धारा के अंतर्गत वे महिलाएं न्याय नहीं मांग सकतीं जो अपने पति के साथ रहते हुए मैरिटल रपे की शिकार हो रही हों.
- इसके अलावा महिलाओं के पास यह भी विकल्प है कि वे घरेलू हिंसा अधिनियम के तहत अपने पति के खिलाफ मामला दर्ज करवा सकती हैं. इस अधिनियम में जबरन बनाए गए यौन संबंधों कोहिंसा की परिभाषा में शामिल किया गया है. लिहाजा 'मैरिटल रेप' से पीड़ित कोई भी महिला अपने पति के

खिलाफ घरेलू हिंसा का मामला दर्ज करवा सकती है. लेकिन मैरिटल रेप को परिभाषितकरने और अपराध घोषित करने की मांग करने वाले मानते हैं कि मौजूदा व्यवस्था में जो विकल्प हैं वे इस अपराध को उसकी गंभीरता से साथ दण्डित करने की बात नहीं करते. इन लोगों का माननाहै कि मैरिटल रेप बलात्कार जितना ही जघन्य अपराध घोषित होना चाहिए.

कई मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि मैरिटल रेप बलात्कार से भी ज्यादा जघन्य अपराध है. इन लोगों के अनुसार मैरिटल रेप के पीड़ितों के साथ ये अपराध बार-बार दोहराया जाता है और उनके पासइससे बचने के कोई विकल्प नहीं होते. लिहाजा इस तरह के अपराध के पीड़ित पर गंभीर मनोवैज्ञानिक प्रभाव होते हैं. लगभग ऐसा ही वर्मा समिति ने भी माना था और अपनी रिपोर्ट में मैरिटल रपे कोअपराध घोषित करने के मांग की थी

मैरिटल रेप पर वर्मा समिति की रिपोर्ट क्या कहती है?

- • 2012 के कुख्यात निर्भया गैंगरेप मामले के बाद महिलाओं से जुड़े कानूनों में सुधार के लिए जस्टिस वर्मा की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया था. इस समिति की संस्तुतियों के आधारबलात्कार से जुड़े कई कानूनों में बदलाव भी किये गए. लेकिन वर्मा समिति की रिपोर्ट को पूरी तरह से स्वीकार नहीं किया गया था. वर्मा समिति का गठन 23 दिसंबर 2012 को किया गया था. इसकेठीक एक महीने बाद इस समिति ने लगभग साढ़े छह सौ पन्नों की अपनी रिपोर्ट सरकार को सौंप दी थी. इस रिपोर्ट में पेज नंबर 113 से 118 तक मैरिटल रेप पर चर्चा की गई है.
- जस्टिस वर्मा और उनके साथियों ने इस रिपोर्ट में कहा था कि 'मैरिटल रेप का अपराध की श्रेणी से बाहर होना उस रुढ़िवादी मानसिकता को दर्शाता है जिसमें पत्नियों को पति की संपत्ति से ज्यादाकुछ नहीं समझा जाता.' रिपोर्ट में यूरोपियन मानवाधिकार आयोग के एक मामले का हवाला देते हुए लिखा है, 'हम इस निष्कर्ष से सहमत हैं कि एक बलात्कारी, बलात्कारी ही होता है और इससेकोई फर्क नहीं पड़ता कि उसका पीड़ित से क्या रिश्ता था.'
- आगे इस रिपोर्ट में कहा गया था, 'धारा 375 से मैरिटल रेप का अपवाद समाप्त किया जाए और कानून में यह स्पष्ट किया जाए कि पीड़ित का अपराधी से क्या रिश्ता है, कोई मायने नहीं रखता.बलात्कार के मामलों में यह अपराधी का पीड़ित का पति होना न तो कोई बचाव हो सकता है और ही सजा कम करने का कोई आधार.' लिहाजा वर्मा समिति ने स्पष्ट कहा था कि एक पति अगरअपनी पत्नी की इच्छा के खिलाफ उसके साथ यौन संबंध बनाता है तो उसे बलात्कार का दोषी माना जाना चाहिए और इसकी सजा भी उतनी ही होनी चाहिए जितनी आम तौर पर बलात्कार केमामलों में होती है.
- वर्मा समिति ने मैरिटल रेप को कानून में शामिल करने के संबंध में यह भी कहा था कि ऐसा करने के लिए पुलिस, अभियोजन और समाज को भी इस बारे में जागरूक करना जरूरी है. दक्षिणअफ्रीका का उदाहरण देते हुए इस रिपोर्ट में कहा गया था कि वहां कानून बनने के बाद भी मैरिटल रेप के मामलों में ज्यादा कमी नहीं आई क्योंकि पुरानी मान्यताओं के चलते समाज में इस तरह केअपराध या तो स्वीकार्य थे या उन्हें उतना गंभीर नहीं माना जाता था. लिहाजा वर्मा समिति ने माना कि मैरिटल रेप को अपराध घोषित करने के साथ ही इस पर व्यापक जागरूकता कार्यक्रम चलाने भीजरूरी हैं.

वर्मा समिति की संस्तुतियों को तत्कालीन केंद्र सरकार ने जल्द ही कानून का रूप दे दिया था लेकिन समिति की सारी बातों को इसमें शामिल नहीं किया गया. मैरिटल रेप पर समिति की संस्तुति कोसरकार ने नकार दिया था और 375 में मौजूद अपवाद को लगभग वैसा ही बनाए रखा.

- कई लोग यह भी सवाल करते हैं कि मैरिटल रेप को लागू करने पर इसके दुरुपयोग की संभावनाएं बहुत होंगी और इस बारे में वर्मा समिति ने भी कोई टिप्पणी नहीं की है. इस सवाल के जवाब में 'ऑलइंडिया प्रोग्रेसिव विमेंस एसोसिएशन' की सचिव कविता कृष्णन कहती हैं,
- मैरिटल रेप का बहुत दुरुपयोग होगा, इससे विवाह की संस्था कमज़ोर हो जाएगी, लड़के शादी करने से डरने लगेंगे आदि, इसतरह की जितनी भी बातें कही जा रही हैं, वो सिर्फ इस मुद्दे को कमज़ोर कर ने के लिए हैं. पित्रसत्तात्मक व्यवस्था को जब भी चुनौती मिली है, ऐसी बातें कही ही गई हैं

9. पुरुषवादी मानसिकता बदलने की जरूरत

आधुनिक कार्य संस्कृति में ज्यादा नुकसान महिलाओं को उठाना पड़ रहा है। वहीं जब विविधता की बात आती है तो नियोक्ता पारंपरिक रूप से 'पाइपलाइन प्रॉब्लम' को दोष देते हैं। काम पर रखने के लिए पर्याप्त महिलाएं हैं ही नहीं। यह वक्तव्य बिजनेस वुमेन मेलिंडा गेट्स ने दिया है।

Root of the problem

- मूल समस्या महिलाओं के प्रति दोयम दर्जे की सोच और उनके प्रति बरते जानी वाली असंवेदनशीलता की है।
- उनकी कार्यक्षमताओं को कठघरे में खड़ा करने वाली मानसिकता इस जुगत में रहती है कि संपूर्ण कार्यव्यवस्था को इतना कठोर और दबावपूर्ण बना दिया जाए कि महिलाएं स्वयं काम छोड़ दें। ऐसा हो भी रहा है और इसका कारण, उनकी क्षमताओं में कमी नहीं बल्कि उनके साथ निरंतर बरते जाना वाला भेदभाव है।

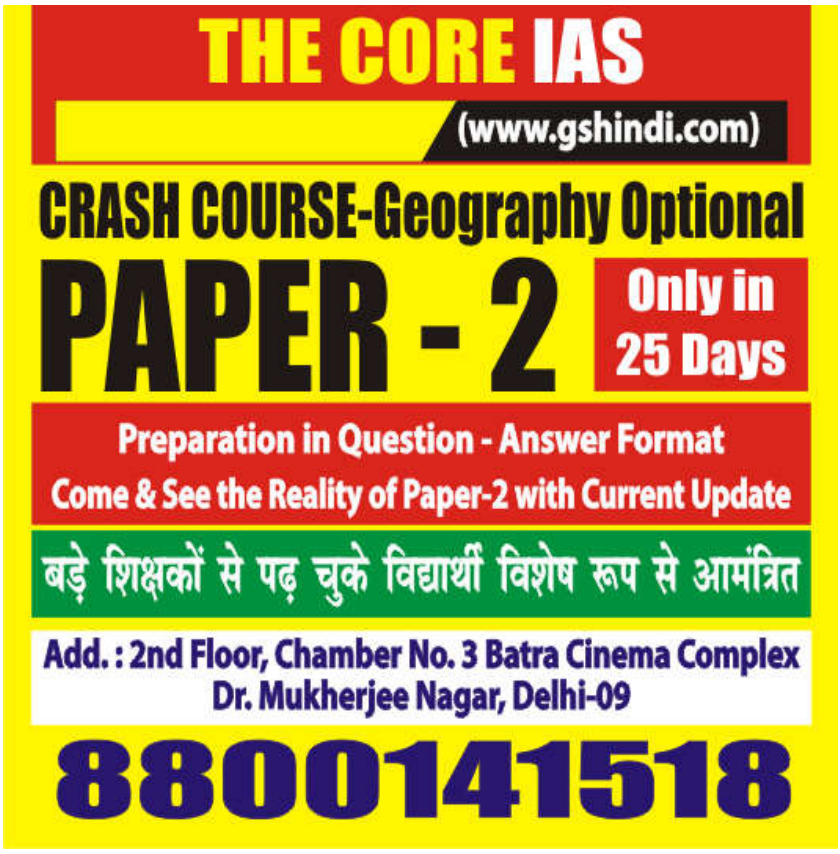

- हमारी यह सोच है कि विकसित देशों में महिलाओं को उनके कार्यस्थलों में समानता का दर्जा प्राप्त है, परन्तु यह मिथक भर है।

Is this limited to Developing world

- विकसित देश हो या विकासशील, महिलाओं को लेकर कमोबेश सभी की सोच एक जैसी है।

Developing world

- भारत में कामकाजी महिलाओं की स्थिति का विश्लेषण किया जाए तो स्पष्ट होता है कि उनके प्रति संपूर्ण कार्यव्यवस्था असंवेदनशील है।

- एक जैसा काम करने के लिए महिलाओं को पुरुषों की तुलना में 25 प्रतिशत कम वेतन मिलता है।
- एक तरफ यह मानकर चल रहे हैं कि स्त्री आत्मनिर्भर हुई है और दूसरी ओर ये आंकड़े उनकी खराब स्थिति की ओर इशारा कर रहे हैं।
- पुरुषात्मक समाज में स्त्रियों को उतनी ही स्वतंत्रता दी जाती है, जितनी कि उनके परिवार के सदस्य उनके लिए सुनिश्चित करते हैं। महिलाओं को दफ्तर की तरफ भागते देख, हम यह सोचने लगते हैं कि महिलाएं उन्नति कर रही हैं परन्तु वास्तविकता में ये वे महिलाएं हैं जो परिवार के आर्थिक उत्तरदायित्वों को बांटने के लिए घर से निकली अवश्य हैं पर न तो परिवार और न ही कार्यस्थल उनके प्रति संवेदनशील है।
- निचले स्तर पर काम करने वाली महिलाएं अपनी खिलाफ हुए शोषण का विरोध करने से भी डरती हैं। वह ऐसा साहस करे भी तो 65.2 प्रतिशत यौन शोषण के मामलों में कोई कार्यवाही ही नहीं होती। महिलाओं के हित किसी के लिए कोई मायने नहीं रखते।

संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था का ढांचा ही कुछ ऐसा है कि महिलाओं के प्रति हो रहे दुव्र्यवहार के लिए उन्हें ही जिम्मेदार माना जाता है और यह भी स्वीकार किया जाता है कि ऐसी घटनाएं कार्यव्यवस्था का हिस्सा है। महिलाओं को विश्व अर्थव्यवस्था का हिस्सा माना ही नहीं जा रहा और पुरुषवादी मानसिकता अर्थव्यवस्था के विभिन्न संसाधनों को पूर्णत: अपने नियन्त्रण में रखना चाहती है।

10. नाबालिग पत्नी के साथ सेक्स को बलात्कार ठहराने वाले फैसले का अमल में आना मुश्किल क्यों?

सर्वोच्च न्यायालय का बाल विवाह पर हाल ही का निर्णय के तर्क नहीं बल्कि इसके प्रभाव चिंता के विषय है | आलोचनात्मक मूल्यांकन करे

Not the reasoning but the implications of the recent ruling on child marriage are a cause for worry. Critically Evaluate

Recent Context

हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने एक बेहद अहम फैसला सुनाते हुए 18 साल से कम उम्र की पत्नी के साथ सेक्स को बलात्कार की श्रेणी में रख दिया है. नाबालिग पत्नी एक साल के भीतर इसकी शिकायत दर्ज करा सकती है.

Contradiction in law?

Law	**Age of consent**		
	Unmarried	**Married**	**Analysis**
IPC	**18**	**15**	Under the Indian Penal Code section 375, it is an offence to have sex with a girl below 18 years of age, regardless of consent. However, it made an exception if the girl was the man's wife, provided she was not below 15. In other words, what was statutory rape is treated as permissible within a marriage.

POCSO	**18**	**18**	POCSO criminalises even consensual teenage sexual activity

अबसे पहले कम उम्र की बच्चियों के साथ यौन संबंध को लेकर दो विरोधाभासी कानून थे. एक तरफ 18 साल के कम उम्र की अविवाहित लड़की यदि स्वेच्छा से सेक्स करे, तो भी उसे बलात्कार ही माने जाने का प्रावधान था. दूसरी तरफ 15 से 18 साल की पत्नी के साथ यौन संबंध बनाना इस श्रेणी में नहीं था. कोर्ट के ताजा फैसले ने 18 साल से कम उम्र की विवाहित और अविवाहित दोनों तरह की लड़कियों के लिए एक जैसा नियम बना दिया है.

चुनौतियां

- पहली नजर में देखने पर यह फैसला बाल विवाह के कारण जबरण यौन संबंधों को झेलने वाली बच्चियों के लिए बड़ी राहत बनता हुआ नजर आता है. पर, असल में इसके व्यावहारिक पक्ष पर गौर से देखने पर कुछ और हकीकत सामने आती है. सबसे पहला सवाल तो यही है कि जो लड़कियां अनिच्छा के बावजूद बाल विवाह के नर्क में धकेल दी गई हैं, वे अपने पति पर बलात्कार का केस करने का निर्णय लेने के लिए असल में कितनी आजाद हैं.
- बाल विवाह कराने वाले माता-पिता को निश्चित तौर पर पता होता है कि शादी के बाद उनकी बेटी का यौन जीवन कैसा होने वाला है. ऐसे में लड़की द्वारा पति पर बलात्कार का केस करने के फैसले में वे उसका कितना साथ देंगे? 18 साल की लड़की के पास परिवार से अलग कोई भी आर्थिक आधार नहीं होता, जिसके सहारे वह केस दर्ज करा सके. हां, किसी सामाजिक संस्था या एनजीओ की मदद से वह जरूर ऐसा करने में सक्षम हो सकती है.

लेकिन यहां भी एक व्यावहारिक अड़चन है. केस करने की स्थिति में प्रबल आशंका है कि उस लड़की का न सिर्फ सामाजिक, बल्कि पारिवारिक बहिष्कार भी होगा. ऐसे में केस के इतर लड़की के रहने, खाने और जीवन यापन के खर्च का सवाल सबसे बड़ा है. सालों तक होने वाले इस सब खर्च को उठाने के लिए शायद ही कोई संस्था तैयार हो.

- तीसरा, नाबालिग पत्नी द्वारा पति पर बलात्कार का केस करने का एक बहुत सीधा सा प्रभाव यह भी है, कि ठीक उसी समय पर दूसरा केस खुद लड़की के मां-बाप के खिलाफ दर्ज होगा - बाल विवाह कराने के कारण. एक 18 साल की बच्ची, जिसका न कोई आर्थिक आधार है, न ही परिवार से अलग कोई सामाजिक सुरक्षा, वह एक साथ मायके और ससुराल वालों पर केस करके भला कहां जाएगी? साफ है कि इस फैसले से एक और अजीब सी स्थिति पैदा होती दिख रही है.

पति पर बलात्कार का केस करने से जुड़ा एक अन्य व्यावहारिक पक्ष यह भी है कि केस करते ही लड़की की सामाजिक छवि बेहद खराब हो जाएगी. लड़की के मानसिक और शारीरिक शोषण और तकलीफ पर ध्यान दिये बिना, सब उसे सिर्फ शादी और परिवार को तोड़ने वाला और पति व मायके वालों को जेल भिजवाने वाली ही मानेंगे. बहुत छोटी उम्र से इन सब ठप्पों के साथ जीना लड़की के लिए एक अलग ही किस्म की भावनात्मक यातना होगी. साथ ही भविष्य में भी उसकी दोबारा शादी के लिए जल्दी ही कोई तैयार नहीं होगा.

Ray of Hope?

- लेकिन अदालत के इस बेहद महत्वपूर्ण फैसले को व्यावहारिक रूप से अमल में लाने में सामाजिक संस्थाएं या एनजीओ, व्यापक स्तर पर बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं.
- सबसे पहले तो वे बाल विवाह कराने वाले लड़के और मां-बाप को यह डर दिखाकर बाल विवाह करने से रोक सकते हैं, कि कहीं नाबालिग बहू अपने पति पर बलात्कार का केस न कर दे. साथ ही कुछ ऐसे मामलों में भी यह फैसला मददगार साबित हो सकता है, जहां शादी के बाद मां-बाप सच में लड़की की स्थिति देखकर दुखी हों और उसकी मदद करना चाहते हों.
- असल में लड़कियों की यौन इच्छा को समाज में आज भी कोई मान्यता नहीं है. यौनेच्छा से तात्पर्य, सेक्स करने की इच्छा और अनिच्छा दोनों से है. यदि समाज लड़कियों की यौनेच्छा को लेकर जरा सा भी सजग या संवेदनशील होता, तो बाल-विवाहों का समाज में कोई अस्तित्व ही नहीं होता. परिवारों से लेकर सामाजिक संगठनों तक, सभी यौनसंबंधों को सिर्फ पुरुष का मूल अधिकार समझते हैं. इस कारण पुरुषों के 'असीमित सेक्स' के अधिकार को नियंत्रित करने वाली कोई भी बात उन्हें बौखला देती है.
- ऐसी ही बौखलाहट के चलते कुछ कट्टरपंथी मुस्लिम संगठनों ने कोर्ट के इस महत्वपूर्ण फैसले पर आपत्ति दर्ज कराई है. उनका कहना है यह फैसला उनके पर्सनल लॉ में दखलंदाजी करता है,क्योंकि शरिया में 13-14 साल की लड़की के विवाह की अनुमति है. हालांकि इस बारे में 'नेशनल यूनिवर्सिटी ऑफ लॉ', हैदराबाद के वाइस चांसलर, फैजान मुस्तफा की राय अलग है. उनका कहना है, कि 'शरिया में किसी चीज के होने का यह कतई मतलब नहीं है कि यदि आपने उसे नहीं माना तो,आप मजहब के खिलाफ हैं. मैं अदालत के इस फैसले को पर्सनल लॉ में दखलअंदाजी नहीं मानता'. हालांकि मुस्लिमों की अपेक्षा हिंदुओं में बाल विवाह ज्यादा संख्या में होते हैं. लेकिन किसी हिंदू संगठन ने इस बारे में अभी तक कोई विरोध दर्ज नहीं कराया है.

हाल ही में आई यूएनएफपीए की रिपोर्ट **'**स्टेट ऑफ वर्ल्ड पॉप्युलेशन **2017'** में सामने आया है कि भारत में आज भी **27** प्रतिशत बच्चों की शादी **18** साल की उम्र से पहले हो जाती है**,** जबकि पूरी दुनिया में बाल-विवाह का औसत **28** प्रतिशत है. यह फैसला बाल विवाह के कारण जबरन यौन संबंधों में फंस चुकी उन **27** फीसदी लड़कियों को**,** कैसे और कितनी राहत पहुंचाएगा**,** इसमें भारी संदेह है. लेकिन जैसा कि पहले भी जिक्र हुआ**,** भविष्य में और नई **27** फीसदी लड़कियों को बाल विवाह के गर्त में गिरने से रोकने में निःसंदेह यह कहीं ज्यादा प्रभावी साबित हो सकता है.

यानी यह कहना गलत नहीं होगा कि कोर्ट का यह फैसला बाल विवाह विरोधी कानून को व्यवहार में सख्ती से लागू करा सकने में बेहद कारगर साबित हो सकता है. ऐसे विवाह को होने से ही रोक लिया जाए तो कम उम्र की लड़कियों को वैवाहिक यौन दासता से मुक्त रखा जा सकता है. लेकिन एक बार बाल विवाह हो जाने पर**,** 18 साल से कम उम्र की पत्नी का इस फैसले का अपने हक में इस्तेमाल बहुत दूर की कौड़ी नजर

आता है. हालांकि बाल विवाह के कारण यौन गुलामी में फंसी बच्चियों को राहत दिलाने की सुप्रीम कोर्ट की इस ईमानदार कोशिश का स्वागत जरूर किया जाना चाहिए.

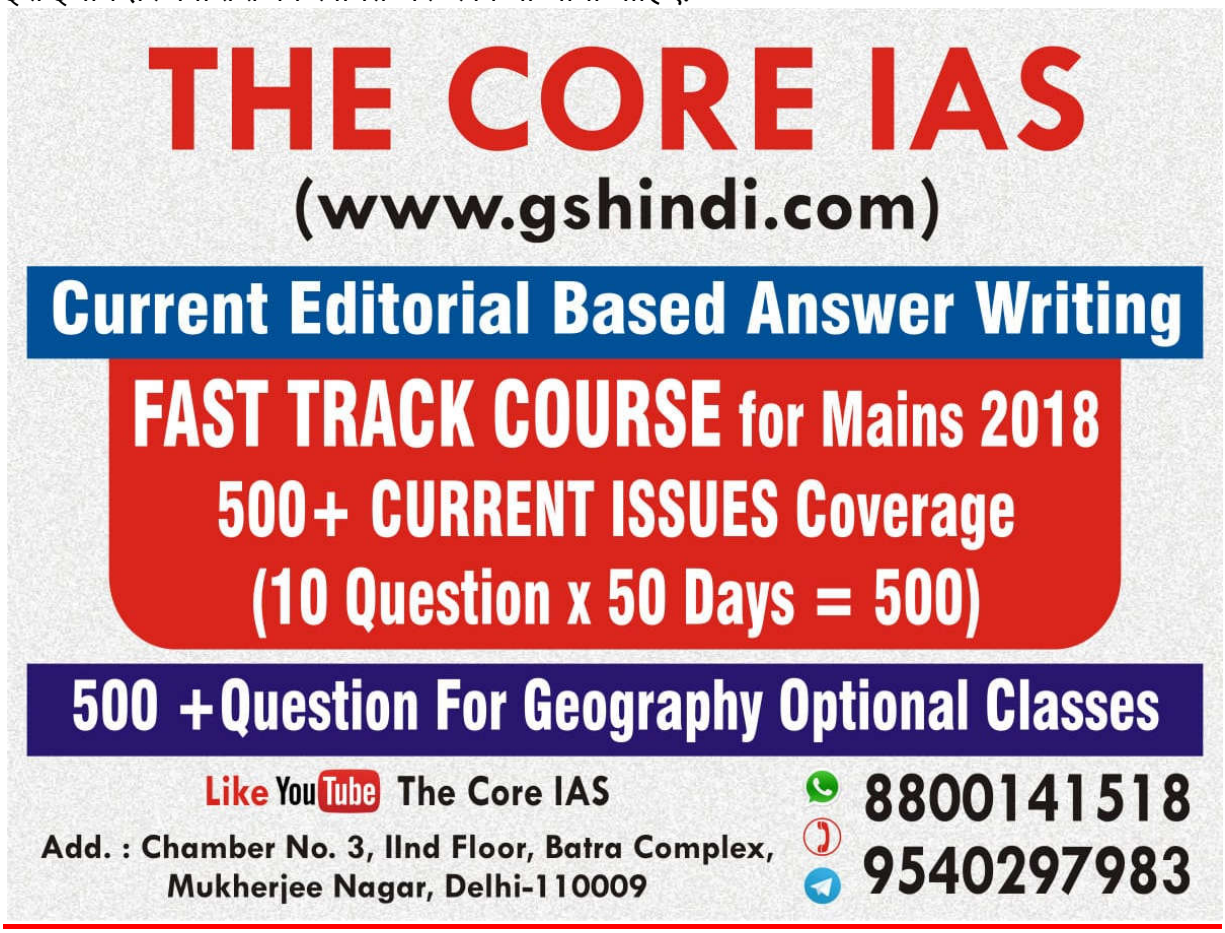

TEST SERIES

GS TEST SERIES: Starting from 1July (Tentative)

Essay Test Series

Optional Test Series: Histoy, Gography,Hindi

POPULATION ISSUES

1. भारत में घटकर 2.2 हुई बच्चे पैदा होने की दर (TFR)

Total; Fertility Rate

- हिंदू और मुस्लिमों को छोड़कर देश में रहने वाले अन्य समुदायों में बच्चे पैदा करने की दर में खासी कमी आई है और यह स्तर रिप्लेसमेंट लेवल से भी कम हो गया है। **इसका अर्थ यह है कि यदि बच्चे इस रफ्तार से पैदा हुए तो भविष्य में समुदाय की आबादी मौजूदा संख्या से भी कम होगी**।
- हिंदुओं और मुस्लिमों में भी फर्टिलिटी रेट गिरा है, लेकिन अब भी 'हम दो हमारे दो' के आंकड़े से यह अधिक है। साल 2015-16 में हुए नैशनल फैमिली हेल्थ सर्वे के मुताबिक हिंदुओं में बच्चे पैदा करने की दर 2.1 पर आ गई है, जबकि 2004-05 में यह आंकड़ा 2.8 का था। पिछले आंकड़े के लिहाज से देखें तो यह बड़ी गिरावट है।
- मुस्लिमों में बच्चे पैदा करने की दर अब भी देश के अन्य समुदायों के मुकाबले अधिक है। मुस्लिम समाज में प्रति परिवार यह आंकड़ा 2.6 है। हालांकि 2004-05 के 3.4 के आंकड़े की तुलना में यह बड़ी गिरावट कही जा सकती है।
- 2015-16 में नैशनल फैमिली हेल्थ सर्वे का धार्मिक आधार पर डेटा निकालने पर यह खुलासा हुआ है। देश में सबसे कम फर्टिलिटी रेट **1.2 जैन समाज का** है।
- देश में **शिक्षा के स्तर में भी जैन समाज के लोग सबसे आगे** हैं। इसके बाद सिखों में बच्चे पैदा करने की दर 1.6, बौद्धों और नव-बौद्धों में 1.7 और ईसाइयों में 2 है। भारत के **कुल फर्टिलिटी रेट की बात करें तो यह 2.2** है।

'गरीबी जितनी अधिक बच्चे भी उतने ज्यादा'

- यदि आर्थिक आधार पर विश्लेषण किया जाए तो न्यूनतम आय वर्ग वाले परिवारों में बच्चों की दर सबसे अधिक 3.2 है, वहीं सबसे उच्च आय वर्ग लोगों में यह आंकड़ा सबसे कम 1.5 है।

जनजातीय समाज में अधिक बच्चे

- सामाजिक आधार पर आंकड़ों का विश्लेषण करें तो सबसे पिछड़े जनजातीय समाज में फर्टिलिटी रेट 2.5 है, जबकि अनुसूचित जाति में यह 2.3 है और पिछड़े वर्ग का आंकड़ा 2.2 है। सवर्ण जातियों में यह आंकड़ा सबसे कम 1.9 है।
- यही नहीं युवा महिलाओं से पैदा होने वाले बच्चों की संख्या अधिक उम्र की महिलाओं की तुलना में खासी कम है। इससे पता चलता है कि बीते दो दशकों में खासा बदलाव आया है।

2.एकल पारिवारिक संरचना ने बच्चों को बुजुर्गों की गोद से वंचित कर दिया

चीन के आधुनिक साहित्य के महान कथाकार लू शून (1881-1936) की एक प्रसिद्ध कहानी: 'एक पागल की डायरी' : इस कहानी का नायक पागल कहता है, 'चार हजार साल से हम मनुष्य का गोश्त खाते आ रहे

हैं। बच्चों ने उसे नहीं चखा है। बच्चों को बचाओ।' आज जब हम बच्चों को हत्या और सामूहिक दुष्कर्म जैसे जघन्य अपराधों में लिप्त पाते हैं तो लगता है कि हमने लू शून की उस चेतावनी पर ध्यान नहीं दिया। और अब बच्चों ने भी आदमी का गोश्त चख लिया है।

नाबालिगों द्वारा किए जाने वाले जघन्य अपराध नाबालिगों द्वारा किए जाने वाले जघन्य अपराधों ने पूरे देश के माथे पर लकीरें पांच साल पहले हुए निर्भया कांड के दौरान उकेरी थीं। 23 वर्षीय निर्भया के साथ की गई दरिंदगी में कुल जो छह लोग शामिल थे, उनमें एक 18 वर्ष से कम उम्र का भी था। उनमें से पांच को तो फांसी की सजा हो गई, लेकिन एक बच गया। इसके बाद नाबालिग की उम्र की सीमा 18 से घटाकर 16 करनी पड़ी। साथ ही कुछ दिनों पहले एक लड़के पर केस चलाने के मामले पर जूवेनाइल जस्टिस बोर्ड ने कहा कि चूंकि अभियुक्त ने जघन्य अपराध किया है और वह इस अपराध के दंड को समझने के योग्य था, इसलिए उस पर मुकदमा वयस्कों की तरह ही चलेगा।

परीक्षा टालने के लिए स्कूली बच्चे की हत्या हाल में हुई कुछ अन्य अत्यंत दुखद घटनाओं से तो लोगों की आंखें फटी की फटी रह गई हैं। गुरुग्राम के एक नामी स्कूल के एक लड़के ने स्कूल के एक बच्चे की हत्या केवल इसलिए कर दी, ताकि कुछ दिनों के लिए परीक्षा टल जाए। नोएडा में तो एक लड़के ने अपनी मां और बहन को इसलिए मार डाला, क्योंकि वे उसे डांटते थे। इसी सिक्के का एक दूसरा पहलू हमें स्वयं के प्रति उनके द्वारा उठाए गए क्रूर कदमों में दिखाई देता है। नाबालिगों एवं युवाओं की आत्महत्या की खबरें आज आम हो गई हैं। 'ब्लू व्हेल' के खौफनाक खेल ने जघन्यता के उस नए स्वरूप को प्रस्तुत किया है जिसमें स्वयं के प्रति क्रूरता के विभिन्न चरण दिखाई देते हैं।

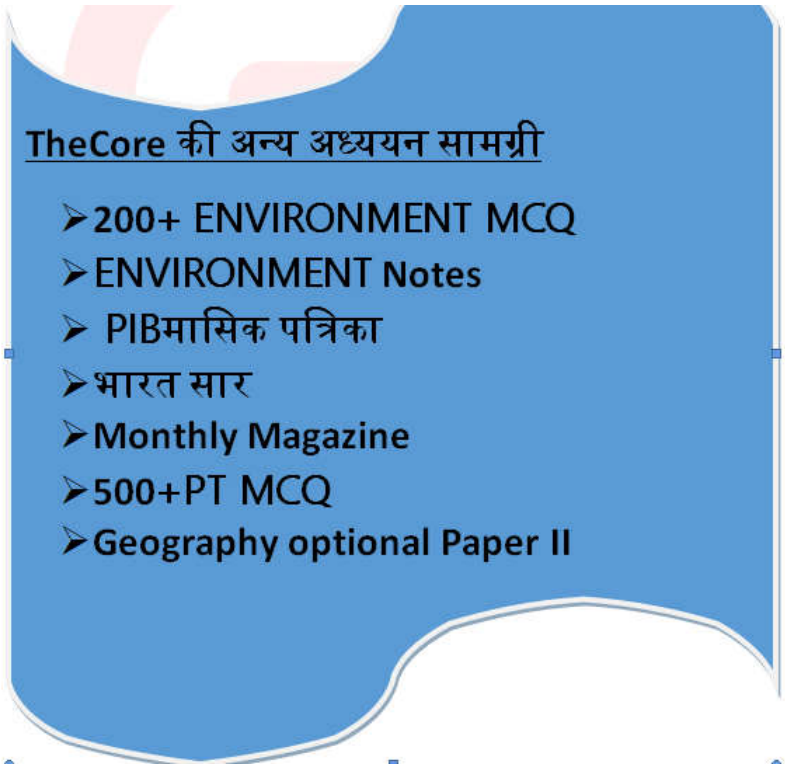

नाबालिगों द्वारा किए जाने वाले अपराधों में पांच सालों में 47 प्रतिशत की बढ़ोतरी राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के आंकड़े बताते हैं कि नाबालिगों द्वारा किए जाने वाले अपराध कुल अपराध का लगभग एक प्रतिशत होते हैं। तीन साल पूर्व के लगभग 45 हजार बाल अपराधों में लगभग 30 हजार अपराध 16 से 18 वर्ष की उम्र के बच्चों द्वारा किए गए। राज्यसभा में बताया गया है कि इस तरह के अपराधों में पिछले पांच सालों में लगभग 47 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है जो बहुत चिंताजनक है।

संस्कार और नैतिक मूल्यों का जबर्दस्त अभाव निर्भया कांड के बाद इस समस्या पर विमर्श के जो बिंदु सामने आए उनमें से अधिकांश का संबंध मुख्यत: इससे जुड़े कानूनों में सुधार और कठोर दंड व्यवस्था से था। इनका अपनी जगह औचित्य

है, लेकिन इसे ही पर्याप्त मान लेना एक बड़ी भूल होगी। इस समस्या की जड़ों की तलाश हमें सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक क्षेत्रों में करनी होगी। इसके लिए मैं अस्सी के दशक में राजकपूर की आई फिल्म 'बॉबी' के एक दृश्य की याद दिलाना चाहूंगा। हॉस्टल में रहकर पढ़ाई कर रहा धनी परिवार का एक नाबालिग बेटा जब अपने जन्मदिन पर घर लौटता है तो वहां पार्टी और सजावट तो खूब हैं, लेकिन उसके माता-पिता नहीं। वे अपने बेटे को 'एंज्वॉय' करने की बात कहकर स्वयं और कहीं चले जाते हैं। मां-बाप के इस व्यवहार से बेटा (ऋषि कपूर) अंदर से टूट जाता है और हताश होकर अपने एक निम्नवर्गीय परिचित के यहां चला जाता है, जहां उसकी भेंट बॉबी नाम की एक लड़की से होती है।

एकल पारिवारिक संरचना ने बच्चों को बुजुर्गों की गोद से वंचित कर दिया दरअसल इस छोटे से किंतु अत्यंत भावनात्मक दृश्य में बालमन की अनेक परतें और छवियां दिखाई देती हैं। आज माता-पिता के पास समय की कमी के कारण बच्चे निहायत ही एकाकी होते जा रहे हैं। एकल पारिवारिक संरचना ने बच्चों को बुजुर्गों की गोद, स्नेहयुक्त स्पर्श और मनोरंजक एवं शिक्षाप्रद कहानियों से वंचित कर दिया है। इसके कारण उनमें संस्कारों और नैतिक मूल्यों का जबर्दस्त अभाव देखने में आ रहा है। यही स्थिति हमारी शिक्षा प्रणाली की भी है। फलस्वरूप हम उनसे जिस तरह के अनुशासन, मर्यादा एवं सहनशीलता जैसे मानवीय मूल्यों की अपेक्षा करते हैं, वे विकसित नहीं हो पाते।

बच्चों में सामाजिकता की भावना का अभाव एक या दो बच्चों की नीति के कारण बच्चा स्वाभाविक रूप से परिवार का लाडला हो जाता है। इसके कारण उसके बिगड़ने की आशंका प्रबल हो जाती हैं। उसे घर के बाहर भी माहौल ऐसा नहीं मिलता, जहां से वह कुछ अच्छे गुण सीख सके। इससे उसके अंदर सामाजिकता की भावना पनप नहीं पाती। नगरों-महानगरों में खुले स्थानों के अभाव ने उसके खेल को इन्डोर एवं कंप्यूटर गेम की ओर धकेल दिया है। खेल के मैदान बच्चों में सहनशीलता तथा सामूहिकता की भावना विकसित करने के सर्वोत्तम एवं स्वाभाविक माध्यम होते हैं। ऐसे में सचिन तेंदुलकर की उस दिवस की प्रतीक्षा सचमुच मन को छू जाती है, जिस दिन माता-पिता अपने बच्चों से पढ़ाई करने के बजाय खेलने के बारे में पूछेंगे

पूंजीवादी व्यवस्था ने बच्चों को महत्वाकांक्षी बना दिया जो कुछ थोड़ा-बहुत बचा था, उन सबका सत्यानाश कर दिया इंटरनेट ने। यह भी धीरे-धीरे मादक पदार्थों की तरह एक नशे का रूप लेता जा रहा है। यही कारण है कि कई देशों ने बच्चों के लिए इस पर प्रतिबंध लगा दिया है। नि:संदेह इस पूंजीवादी व्यवस्था ने आज के बच्चों को जितना अधिक महत्वाकांक्षी बना दिया है, वह उनके संस्कारों एवं मूल्यों के क्षरण का एक बहुत बड़ा कारण बन गया है। करियर एवं जल्दी से सब कुछ पा लेने की अदम्य चाहत ने उन्हें अंदर से बेहद बेचैन और असंतुलित कर दिया है। इसी की परिणति हम साधनों की पवित्रता के पतन के रूप में देख रहे हैं।

कोई भी बच्चा अपराधी बच्चे के रूप में जन्म नहीं लेता कुल मिलाकर यह कि हमें इस बात को अच्छी तरह से समझकर खुलेमन से स्वीकार करना होगा कि कोई भी बच्चा अपराधी बच्चे के रूप में जन्म नहीं लेता। आगे चलकर वह जो भी रूप धारण करता है, वह समाज के सांचे के अनुकूल होता है। इसलिए नाबालिगों द्वारा किए जाने वाले अपराध को परिवार एवं समाज द्वारा किए जाने वाले अपराध के रूप में देखा जाना चाहिए। तभी इसका कुछ हल निकल सकेगा

3. पुरूषों के शहर की तरफ पलायन करने से कृषि में महिलाओं की हिस्सेदारी बढ़ी

पुरूषों का गांव की तरफ से शहर में पलायन होने की वजह से महिलाओं की हिस्सेदारी कृषि के क्षेत्र में बढ़ रही है। इसकी वजह से महिलाएं कृषि को लेकर विभिन्न भूमिकाओं में दिख रही है। मसलन किसान, उद्यमी और श्रम में महिलाओं की हिस्सेदारी बढ़ी है। वैश्विक स्तर पर देखा गया है कि महिलाओं ने खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में और स्थानीय जैव व कृषि को सुरक्षित बनाने में अहम भूमिका को निभाया है। ग्रामीण महिलाओं ने विभिन्न तरीके के प्राकृतिक संसाधनों का इस्तेमाल करते हुए प्रबंधन का एकीकृत ढांचा विकसित किया है जिससे रोजमर्रा की जरूरतें पूरी की जाती हैं। अब जरूरत इस बात की है कि महिलाओं तक जमीन, पानी, क्रेडिट और प्रौद्योगिकी पहुंच बढ़ाई जाए। भारत की स्थिति देखते हुए ग्रामीण महिलाओं को कृषि को लेकर प्रशिक्षण दिए जाने की जरूरत है। महिलाओं को अधिकार दिए जाने के बाद कृषि उत्पादकता में सुधार हुआ है। महिला किसानों को अधिकार दिलाने को लेकर सरकार ने कई कदम उठाए है। महिलाओं को मुख्यधारा की कृषि में लाने के लिए निम्नलिखित कदम उठाए गए हैं –

- सभी योजनाओं, कार्यक्रमों और विकास संबंधित गतिविधियों में किए जाने वाले आवंटन में महिलाओं के लिए 30 प्रतिशत निर्धारित किया जाना सुनिश्चित किया गया है।
- लाभदायक कार्यक्रमों, योजनाओं , महिला केंद्रित गतिविधियों पर जोर देने की शुरूआत की गयी है।
- क्षमता विकास गतिविधियों और छोटी बचत के जरिए महिला स्वयं सहायता समूह पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। विभिन्न निर्णय लेने वाले निकायों में उनका प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए उन्हें तमाम तरीके की सूचनाएं मुहैया कराने के इंतजाम किए गए हैं।
- कृषि में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका को मान्यता देते हुए कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय ने प्रत्येक वर्ष 15 अक्टूबर को महिला किसान दिवस घोषित किया है।
- उत्पादकता बढ़ाने के लिए महिलाओं की कृषि मूल्य कड़ी की उत्पादन, फसल पूर्व, कटाई, पश्च प्रसंस्करण, पैकेजिंग, विपरण से सभी स्तरों पर अधिपत्य होने के चलते महिलाओं की विशिष्ट भागीदारी जरूरी है। छोटी खेत जोत क्षेत्रों की उत्पादकता बढ़ाने, ग्रामीण कार्याकल्प में सक्रिय एजेंटों के रूप में महिलाओं को जोड़ना और लैंगिक विशेषता के चलते विस्तार सेवाओं में पुरूषों व महिलाओं को लगाने के लिए समावेशी परिवर्तनकारी कृषि नीति महिला विशिष्ट हिस्सेदारी पर लक्षित होना चाहिए।

4. देश में दो करोड़ से ज़्यादा बेटियां हैं जिन्हें उनके माता-पिता जन्म नहीं देना चाहते थे

देश में लगभग दो करोड़ 10 लाख बेटियां ऐसी हैं जिन्हें उनके माता-पिता जन्म नहीं देना चाहते थे. यानी उनके माता-पिता को चाहत तो बेटे की थी लेकिन उसकी जगह अनचाही बेटियों का जन्म होता गया. देश में पहली बार अपनी तरह का यह आकलन सामने आया है. वह भी सरकारी स्रोत से.

- वित्त वर्ष **2017-18** के आर्थिक सर्वेक्षण में यह आकलन शामिल किया गया है. और इसके लिए अमेरिका की नॉर्थवेस्टर्न यूनिवर्सिटी की प्रोफ़ेसर सीमा जयचंद्रन के अध्ययन और शोध पत्रों को आधार बनाया गया है.

- सीमा इस यूनिवर्सिटी में विकास अर्थशास्त्री हैं. उनके शोध पत्र **2017** में प्रकाशित किए गए हैं. शोध पत्रों के अनुसार भारत में **0** से **25** साल तक की जितनी बेटियां हैं उनमें अधिकांश **'**सन मेटा प्रिफ़रेंस**'** का नतीज़ा हैं.

5.अगले सात साल में हम जनसंख्या में दुनिया में नंबर एक हो जाएंगे

संयुक्त राष्ट्र की आर्थिक और सामाजिक मामलों की कमेटी की हालिया रिपोर्ट चिंता बढ़ाने वाली है, जिसमें कहा गया है कि अगले सात साल में हम जनसंख्या में दुनिया में नंबर एक हो जाएंगे। यानी हम चीन को जनसंख्या के मामले में पीछे छोड़ देंगे। कुछ लोग खुश हो सकते हैं कि भारत जनसंख्या के मामले में दुनिया में सबसे बड़ा देश बन जायेगा। मगर असली सवाल ?

- यह है कि क्या हमारे पास इस आबादी को देने के लिये पर्याप्त भोजन-पानी होगा?
- आबादी तो बढ़ जायेगी पर भूगोल तो वही पुराना रहेगा?
- संसाधन सीमित हैं।
- शासन की तमाम नाकामियां यथावत रहने वाली हैं। सबसे ज्यादा युवाओं के देश में हर हाथ को हम काम नहीं दे पाये हैं। देश में तमाम तरह के हिंसक प्रतिरोधों में ये बेरोजगार धर्म, प्रांत व वाद के बहाने इस्तेमाल किये जा रहे हैं।
- यदि इनके पास काम होता तो ये स्थिति नहीं पैदा होती। इसके साथ ही आने वाले समय में बूढ़ी होती पीढ़ी की जिम्मेदारी भी हमारी होगी, जिसे हम सामाजिक सुरक्षा अभी तक नहीं दे पाये हैं। इस मायने में यह बढ़ती आबादी सामाजिक असंतोष का वाहक बन सकती है। रोटी, कपड़ा और मकान की कमी हिंसक प्रतिरोध को जन्म दे सकती है।

दरअसल, आजादी के सात दशक बाद देश में जो अथाह गरीबी है, उसके मूल में सामाजिक अन्याय भी निहित है। समाज में सुविधाओं का न्यायपूर्ण वितरण न हो पाना भी इसकी बड़ी वजह है। वैश्वीकरण व उदारीकरण के दौर में अर्थव्यवस्था का जो ढांचा सामने आया है, उसने अमीरी-गरीबी की खाई को और चौड़ा किया है। बदलते वक्त के साथ अब बुनियादी जरूरतों के सिवाय जीवनशैली से जुड़ी आवश्यकताओं का स्वरूप भी बदला है। लोगों में संतोष का भाव अब पहले जैसा नहीं रहा। बदलती जीवनशैली के साथ हमारी आवश्यकताएं भी बदली हैं और शौक भी। क्या हम इतनी बड़ी आबादी की मूलभूत जरूरतों को पूरा करने के लिये योजनाबद्ध ढंग से काम कर रहे हैं? हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि इन बदली आवश्यकताओं को पूरा करने का दबाव इस धरती को भी झेलना होगा। क्या वह यह दबाव सहने की स्थिति में है? धीरे-धीरे हमारी जैव विविधता सिमटती जा रही है। जंगलों में कंक्रीट के जंगलों के विस्तार ने कई दुर्लभ जीव प्रजातियों व वनस्पतियों को लील लिया है। जो परोक्ष रूप से हमारे जलवायु परिवर्तन का वाहक बन रहे हैं, जिसका खमियाजा हमें भी गहरे तक भुगतना होगा। ऐसे में परिवार कल्याण की नीतियों पर नये सिरे से विचार करने की जरूरत है।

6.त्रासदी से कम नहीं बढ़ती आबादी

देश की तेजी से बढ़ती जनसंख्या, सरकार व जागरूक लोगों के लिए चिंता का विषय बनती जा रही है। सीमित संसाधनों के चलते सरकारों के लिए अपने नागरिकों को जीवन की मूलभूत सुविधाएं मुहैय्या कराना भी दिन-ब-दिन मुश्किल होता जा रहा है। कैसे नियंत्रण पाया जा सकता है जनसंख्या वृद्धि पर?

Current Problems of India lies in Population

भारत आज कई गंभीर समस्याओं से जूझ रहा है जिनमें प्रमुख है ऊर्जा, पानी, गरीबी, कुपोषण, सुशासन, भ्रष्टाचार, सामाजिक और धार्मिक संघर्ष। जीवन की इतनी जटिल समस्याओं के बीच देश की बढ़ती जनसंख्या जैसी समस्या पर चिंतन करने की किसे फुरसत है। इनसभी समस्याओं का सम्बंध किसी न किसी स्तर पर तेजी से बढ़ती जनसंख्या से जुड़ा हुआ है। हमारे देश के वृहद् जानसांख्यिकी भार से पार पाने के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की आवश्यकता है। साथ ही यह भी देखना होगा कि बढ़ती जनसंख्या को भी नियंत्रित करने के गंभीर प्रयास किए जाएं।

What to be done?

- हमें प्राथमिक स्वास्थ्य और प्रजनन सम्बंधी नीतियों में सुधार कर अनचाहे गर्भ के मामलों में कमी लानी होगी।

Population growth in India

- किसी भी देश के लिए बढ़े हुए जनसंख्या घनत्व और निम्न जीवन स्तर के साथ लगातार बढ़ती जनसंख्या**,** त्रासदी का काम ही करती रही है। हमारे देश की आबादी में हर दशक में सोलह करोड़ से ज्यादा लोग जुड़ते जा रहे हैं।
- गौरतलब है कि भारत की जनसंख्या **1992** में **95.6** करोड़ से बढ़कर वर्ष **2015** में **1.28** अरब हो गई। बीस साल के कम समय में ही देश की जनसंख्या में **32.6** करोड़ की वृद्धि हुई।
- यह वृद्धि संयुक्त राज्य अमरीका की कुल जनसंख्या के बराबर है। वर्तमान में इसमें एक से सवा करोड़ व्यक्ति प्रति वर्ष की दर से बढ़ोतरी हो रही है। देश में जनसंख्या वृद्धि की यही रफ्तार रही तो सरकार को वर्ष **2030** तक बीस करोड़ लोगों के जीवनयापन की अतिरिक्त व्यवस्था करनी होगी।

Future population prospect

- अनुमान है कि तब तक देश की जनसंख्या एक अरब चालीस करोड़ तक पहुंच जाएगी। हाल ही संयुक्त राष्ट्र ने विश्व में अनियंत्रित तरीके से बढ़ती जनसंख्या पर चिंता जताते हुए **'**द वर्ल्ड पॉपुलेशन प्रॉस्पेक्ट्स : द **2017** रिवीजन**'** शीर्षक से एक रिपोर्ट प्रकाशित की है।
- रिपोर्ट के अनुसार वर्तमान में विश्व में सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश चीन है। इसमें वर्तमान में **1.4** अरब लोग निवास करते हैं।
- भारत की जनसंख्या वर्तमान में **1.3** अरब है।

हमारे देश में तेजी से बढ़ती जनसंख्या का एक महत्वपूर्ण कारण अनचाहा गर्भ भी माना जा सकता है। आंकड़ों के अनुसार देश में प्रति दस में से चार मामले ऐसे पाए गए हैं जो या तो अनियोजित थे अथवा महिला द्वारा अनचाहे थे। इनमें से दो तिहाई से भी अधिक ने न चाहते हुए भी अपने बच्चों को जन्म दिया और अनचाहे ही देश की जनसंख्या वृद्धि में योगदान दिया। एक रिपोर्ट के अनुसार वर्ष**2015** में **1.28** अरब जनसंख्या में से करीब **48** करोड़ लोग अनचाहे गर्भ का परिणाम थे और इनमें से अधिकतर निचले तबके से थे।

समाज पर अनचाहे गर्भ के दुष्परिणाम देखने को मिले हैं। यह सीखने की क्षमता के साथ ही सामाजिक-आर्थिक विकास की गति को अवरुद्ध करता है। कारण साफ है अनचाहे गर्भ से जन्म लेने वाले बच्चों का पालन-पोषण गरीब परिवेश में होता है। पोषित खुराक न मिलने के कारण ये बच्चे मानसिक और शारीरिक दृष्टि से कमजोर रह जाते हैं। वर्ष **2015** के अर्थशास्त्र के नोबल पुरस्कार विजेता प्रो. एंगस डिटॉन ने भारत

में गरीबी व कुपोषण के संबंध पर अध्ययन में बताया कि भारत में किस तरह कुपोषण के कारण मनुष्य का विकास प्रभावित होता है।

उनके अनुसार मनुष्य की लम्बाई और मस्तिष्क का विकास बाल्यकाल के पोषण पर निर्भर करता है। यह बहुत ही निराशाजनक है कि भारत अनचाहे गर्भ, अनियंत्रित विकास और मानवीय यंत्रणा के मामलों में चरम बिन्दु पर पहुंच चुका है। जनसंख्या की इस वृद्धि दर को नियंत्रित करना होगा। यह शिक्षा, स्वास्थ्य, खाद्य सुरक्षा प्रदान करने जैसे मुद्दों पर सरकार की क्षमताओं पर प्रश्न खड़े करती है। देश के अधिकतर नागरिक आज भी मूलभूत सुविधाओं से भी वंचित हैं। संख्या और संसाधनों के मध्य यह दूरी लगातार बढ़ती जा रही है।

6. कम होती लड़कियां

देश में लिंग-अनुपात के लगातार कम होने के जो आंकड़े हमारे सामने आ रहे हैं, वे न सिर्फ हमारी मानसिकता बताते हैं, बल्कि यह भी बताते हैं कि इसे दुरुस्त करने के सारे सरकारी और गैर-सरकारी प्रयास निरर्थक हो चुके हैं।

- उसके लिए चले जन-जागरण और विज्ञापन अभियानों में पैसा भले ही लगा हो, लेकिन नतीजा कुछ नहीं निकला।
- साथ ही लिंग परीक्षण रोकने के लिए की गई सारी कोशिशें, सारी सख्ती और सारी चेतावनियां भी बेमतलब साबित हुईं।
- लगभग डेढ़ दशक के इन तमाम प्रयासों के बाद अब ऐसा लग रहा है कि हम आगे बढ़ने के बाद और पीछे आ गए हैं।

Situation across the states

देश के तकरीबन सभी राज्यों में यही हाल है। पिछले कुछ साल से पंजाब और हरियाणा जैसे राज्यों में हालत मामूली ही सही, सुधार की ओर बढ़ती दिख रही है, लेकिन लिंग-अनुपात के मामले में स्थिति अब भी शर्मनाक बनी हुई है। जबकि उत्तर प्रदेश, दिल्ली, उत्तराखंड, मध्य प्रदेश में लड़कों के मुकाबले लड़कियों की संख्या का कम होना अभी तक जारी है। पूर्वोत्तर भारत के असम और मणिपुर जैसे जो प्रदेश अभी तक इस मामले में ठीक माने जाते थे, अब वहां भी लड़कियों की संख्या लड़कों के मुकाबले कम होने लगी है। केरल अकेला राज्य है, जहां स्थिति दूसरे राज्यों के मुकाबले पहले ही बेहतर थी, उसने अपनी बढ़त को तेज किया है। वह 1,000 लड़कों के मुकाबले 1,024 लड़कियों के अनुपात तक पहंुच गया है।

Other form of discrimination

- नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वे के ये आंकड़े यहीं तक नहीं रुकते, वे बताते हैं कि मामला लड़कों के मुकाबले कम लड़कियों के पैदा होने तक ही नहीं है।
- कुपोषण और अन्य बीमारियों के कारण पांच साल तक के बच्चों की जो मृत्यु-दर है, उसमें लड़कों के मुकाबले लड़कियों की संख्या ही ज्यादा होती है।
- पिछले साल ऐसे कुपोषित या रोगग्रस्त 8,42,000 बच्चों को नियानेटल केयर यूनिट में भर्ती कराया गया था, उनमें सिर्फ 41 प्रतिशत लड़कियां थीं।
- यह बताता है कि बीमार बच्चों में भी इलाज के लिए हमारी प्राथमिकता लिंग आधारित है। यानी पहले तो हम लिंग परीक्षण द्वारा बड़ी तादाद में लड़कियों को पैदा होने से ही रोक देते हैं और जो लड़कियां

पैदा होती भी हैं, उनके भी जीने की संभावनाएं लड़कों के मुकाबले बहुत कम होती हैं। इस रिपोर्ट के अनुसार एक दशक में लगभग 70 लाख लड़कियां हमारी गलत सामाजिक सोच की भेंट चढ़ जाती हैं। यह संख्या बुल्गारिया जैसे देश की पूरी आबादी के बराबर है।

What measures to be taken

यह ऐसी समस्या है, जिसका मुकाबला न तो हम पूरी तरह सरकारी प्रयासों से कर सकते हैं, और न ही गैर-सरकारी संस्थाओं की सक्रियता से। इन दोनों की कोशिशें जरूरी हैं, लेकिन पर्याप्त नहीं हैं। यह स्थिति स्त्री को दोयम मानने की हमारी रुग्ण सामाजिक सोच का परिणाम है, इसलिए इसका मुख्य मुकाबला हमें सामाजिक स्तर पर ही करना होगा। यह काम दो कारणों से कठिन है, एक तो हमारी यह सोच सदियों पुरानी है, जो पिछले कुछ समय में ज्यादा ही मजबूत हो गई है। दूसरे, वे सामाजिक सुधार आंदोलन बहुत कम हो गए हैं, जो पूरे समाज की सोच बदल देते थे। हालांकि यह असंभव नहीं है, क्योंकि अतीत में भी हमने कई सामाजिक बुराइयों से मुक्ति पाई है और हमारे यहां सामाजिक सुधार की एक बड़ी परंपरा रही है, जो हाल-फिलहाल कुछ कमजोर पड़ी है। विडंबना यह है कि लड़कियों की संख्या उस समय कम हो रही है, जब ये लड़कियां ही हमें गर्व के कारण दे रही हैं- चाहे वह विभिन्न परीक्षाओं में अव्वल आने का मामला हो या ओलंपिक जैसे खेलों में पदक जीतने का।

Indian Society

1.प्रवासी भारतीयों के माध्यम से भारतीय संस्कृति को विश्व स्तर पर फैलाने का कार्य{GLOBALISATION EFFECT ON CULTURE}

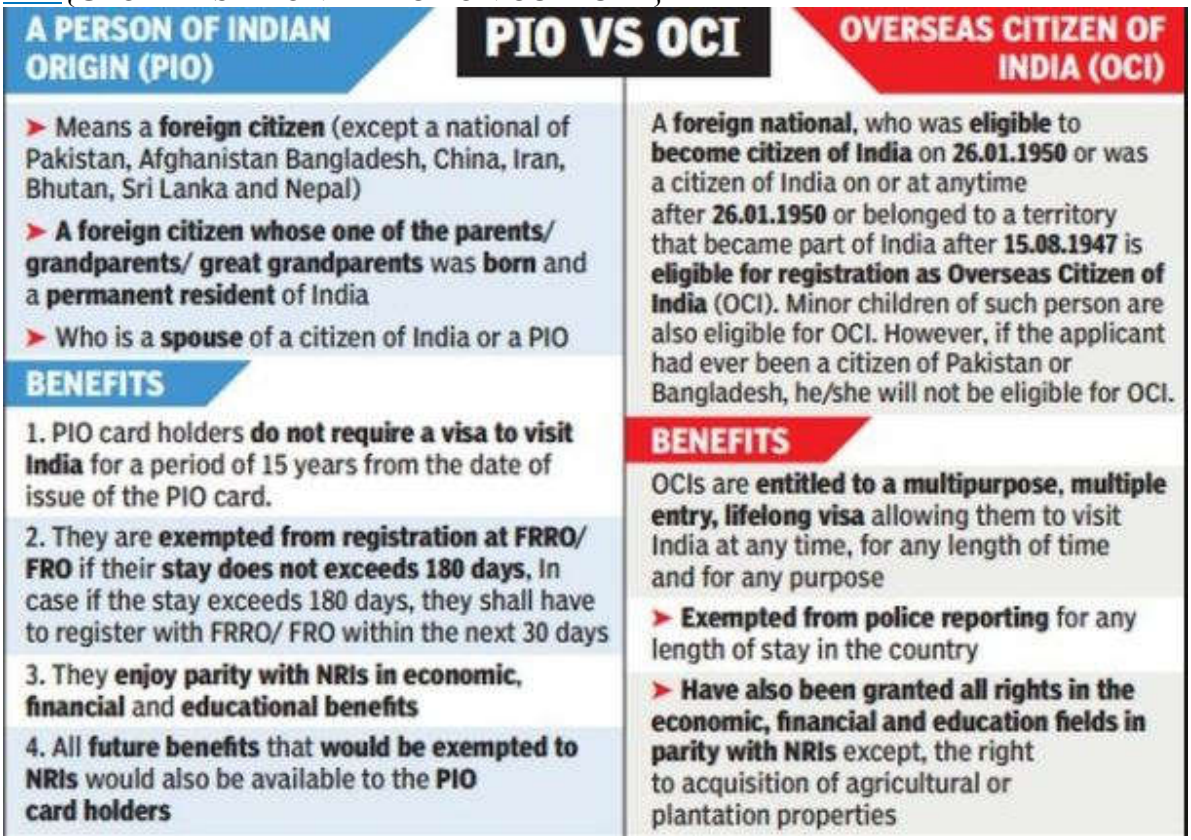

विश्व में प्रवासी भारतीय की विशेष पहचान

विश्व में प्रवासी भारतीय अपनी एक अलग पहचान बनाए हुए हैं। आज भारत के बाहर कई देशों के शासनाध्यक्ष भी भारतीय हैं। इनमें आयरलैंड के मराठी मूल के और पुर्तगाल के गोवा मूल के प्रधानमंत्री हालिया नाम हैं। प्रवासी भारतीय दिवस नौ जनवरी 1915 को महात्मा गांधी के दक्षिण अफ्रीका से लौटने के उपलक्ष्य में मनाया जाता है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार दुनिया भर में प्रवासी भारतीयों की संख्या करीब 3 करोड़ 12 लाख है। इनमें से एक करोड़ 30 लाख उनकी है जो एक समय गिरमिटिया कहे जाते थे। ये वे प्रवासी भारतीय है जिनके पूर्वजों को अंग्रेज शासक मजदूरी करने के लिए मॉरिशस, फिजी, सूरीनाम, गुयाना, त्रिनिदाद आदि देशों में ले गए थे। इनमें एक बड़ी संख्या उत्तर प्रदेश और बिहार से गए लोगों की थी। इनकी खासियत यह है कि इन्होंने खुद को अपनी पुरानी परंपरा यानी भारतीय संस्कृति से जोड़े रखा है। वैसे तो आजादी के बाद ही बनारसी दास चतुर्वेदी ने प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू से एक प्रवासी भारतीय केंद्र बनाने का सुझाव दिया था, लेकिन यह संकल्पना बहुत बाद में पूरी हो सकी। अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार ने 2003 से प्रवासी भारतीय सम्मेलन की शुरुआत की। इसके बाद मनमोहन सिंह सरकार ने अलग से एक प्रवासी कार्य मंत्रालय बनाया। इसे वर्तमान सरकार ने विदेश मंत्रालय का अंग बना लिया है। अब तक

एक दर्जन से अधिक प्रवासी भारतीय सम्मेलन हो चुके हैं। ये भारत के अलग-अलग प्रदेशों में होते रहे हैं ताकि विश्व में बसे सभी प्रवासी भारतीयों की भाषाई एवं प्रांतीय अस्मिता भी उन्हें भारत से जुड़ने के लिए प्रेरित करे।

प्रवासी भारतीय भारत के साथ जुड़ें

भारत सरकार की प्रवासी भारतीयों से दो अपेक्षाएं हैं। एक तो वे भारत के साथ अपनी जड़ों से जुड़ें और साथ ही अपने अनुभवों का लाभ भारत को समृद्ध करने में प्रदान करें। इसी प्रकार प्रवासी भारतीयों की भी भारत से कुछ अपेक्षाएं है। गिरमिटिया लोगों के वंशज भारतीयों की समस्या कुछ अलग है तो एनआरआइ वर्ग वाले प्रवासी भारतीयों की अलग। प्रवासी भारतीयों का तीसरा समूह वह है जो खाड़ी देशों में कामगार के रूप में है। इस तरह भारत सरकार को तीन प्रकार के प्रवासियों को अलग-अलग तरह से संतुष्ट एवं समायोजित करना पड़ता है।

भारत के प्रवासी ही सबसे ज्यादा विदेशी मुद्रा स्वदेश भेजते हैं|

प्रवासी भारतीयों का यह तीसरा वर्ग विदेशी मुद्रा का एक बड़ा स्रोत है। विश्व बैंक के अनुसार भारत के प्रवासी ही सबसे ज्यादा विदेशी मुद्रा स्वदेश भेजते है। चीन के प्रवासी विदेशी मुद्रा स्वदेश भेजने के मामले में दूसरे नंबर पर चले गए हैं। इन तीन तरह के प्रवासी भारतीयों की समस्याएं अलग-अलग तरह की है। इन सभी का ख्याल रखना और उनकी समस्याओं का निराकरण करना भारत सरकार की जिम्मेदारी है। विश्व में सबसे बड़ा डायस्पोरा होने के कारण अब समय आ गया है कि सरकार अलग-अलग देशों के प्रवासी भारतीयों से संवाद स्थापित करे और उनकी समस्याओं के समाधान के लिए विश्व प्रवासी भारतीय सचिवालय जैसे केंद्र की स्थापना करे। इसी के साथ उसे दुनिया भर के प्रवासी भारतीयों को एक सूत्र में पिरोने का भी काम करना होगा ताकि वे भारत की प्रतिष्ठा और पहचान बढ़ाने में सहायक हो सकें तथा एक-दूसरे की मदद भी कर सकें।

प्रवासी भारतीयों की समस्याओं के समाधान के लिए अलग सचिवालय हो
वैसे तो भारत सरकार के अलग-अलग मंत्रालय प्रवासी भारतीयों की समस्याओं का समाधान करते है, लेकिन कई बार उनमें आपसी समन्वय न हो पाने के कारण मुश्किल पेश आती है। इसी कारण एक ऐसे केंद्र या सचिवालय की अपेक्षा है जो प्रवासी भारतीयों की हर तरह की समस्याओं का समाधान करने में सक्षम हो सके, चाहे वे आर्थिक हों या सामाजिक।

भारतीय संस्कृति को विश्व स्तर पर फैलाने का कार्य

भारत सरकार को प्रवासी भारतीयों के जरिये भारतीय संस्कृति को विश्व स्तर पर फैलाने के लिए कुछ अतिरिक्त कार्य करना चाहिए। प्रवासी भारतीयों के सहयोग से दीवाली जैसे पर्व को दुनिया भर में वैसे ही मनाया जा सकता है जैसे क्रिसमस मनाया जाता है। ऐसी कोई पहल प्रवासी भारतीयों के विभिन्न संगठन भी कर सकते हैं। हालांकि अभी भी कई देशों में प्रवासी भारतीय होली, दीवाली के साथ अन्य अनेक पर्व मनाते हैं, लेकिन आम तौर पर उनमें दूसरे लोगों अर्थात गैर भारतीयों की भागीदारी कम ही होती है। क्या यह आवश्यक नहीं कि प्रवासी भारतीयों के संगठन सुख-समृद्धि के पर्व दीवाली को सारी दुनिया से परिचित कराएं? इसी के साथ वसुधैव कुटुंबकम की अवधारणा से भी दुनिया को नए सिरे से परिचित कराने का काम हो सकता है। योग, आयुर्वेद, प्राचीन भारतीय ज्ञान का प्रचार-प्रसार भी प्रवासी भारतीय आसानी से कर

सकते हैं। अगर भारत सरकार और प्रवासी भारतीयों के बीच आपसी समन्वय और भरोसा और अधिक बढ़ सके तो इससे दोनों को लाभ होगा।

2. समय से पहले जवान हो रहे बच्चे खुद के भविष्य के लिए घातक

असमय जवान हो रहे बच्चे खुद के भविष्य के लिए घातक सिद्ध हो रहे हैं। कोई पुलिस या सरकार इस पर कानून बनाकर नियमन नहीं लगा सकती। सबसे जरूरी है कि हम अपने बच्चों की परवरिश के लिए कैसे अच्छा माहौल पैदा करें? घर का आंगन बच्चों की पहली पाठशाला है, यह सबलोग जानते-मानते हैं। लेकिन, यही पाठशाला आज खो गई है।

- कामकाजी दबाव में अभिभावक अपने बच्चों को समय नहीं दे पा रहे हैं। विद्यालय में पाठ्यक्रमों की भीड़ में नैतिक मूल्य का अध्याय कहीं खो गया है।
- Example: ताजा उदाहरण बोकारो का है, जहां एक किशोर ने दूसरे किशोर की हत्या एक दिन पूर्व केवल इस बात पर कर दी कि साथी किशोर ने उसे मोबाइल नहीं दिया। बहुत वीभत्स तरीके से मार कर चेहरे पर एसिड डाल दिया ताकि उसकी पहचान नहीं हो सके और मोबाइल को खेत में गाड़ दिया। भला हो पुलिस का जो तह तक पहुंच गई और यह खुलासा हो सका कि हत्या के पीछे स्मार्ट फोन की चाहत थी। गला घोंटकर हत्या करने के बाद शव की पहचान मिटाने चेहरे पर एसिड डालने से मुंह का अधिकतर हिस्सा गल गया था। यह साबित करता है कि एक किशोर अपने साथी की हत्या के समय क्रूरता की किस हद को पार कर रहा था।

नीतेश विनोद बिहारी महतो सरस्वती विद्या मंदिर, गुंजरडीह की सातवीं कक्षा का छात्र था। 12 जनवरी की रात से ही वह लापता था। पिता ने स्थानीय थाने में उसकी गुमशुदगी का सनहा दर्ज कराया था। इसी बिना पर छानबीन हुई और हत्यारोपी साथी के गिरेबान तक पुलिस का हाथ पहुंचा। कई घरों में अभिभावक खुद ही बच्चों के हाथ में महंगे मोबाइल दे दे रहे हैं। मोबाइल स्टेटस सिंबल का उपकरण बन गया है। बोकारो के जिस तारमी गांव के स्कूली छात्र नीतेश की हत्या हुई, उसके अभिभावक भी उसे महंगा स्मार्ट फोन दे चुके थे। स्मार्ट फोन की दुनिया आभासी है। किशोर मन उसमें कुलांचे मारता है। इंटरनेट के सस्ते और कुछ फ्री पैक ने उत्प्रेरक का काम किया है। विज्ञान के वरदान बनाम अभिशाप के उत्स को हमें समझना होगा। एक जिम्मेदार माता-पिता की भूमिका निभानी होगी, तभी नीतेश जैसे किशोर की हत्या नहीं हो सकेगी और किसी किशोर मन को हिंसक होने से बचाया जा सकेगा। इस काम की शुरुआत घर से ही हो सकती है। न्यूक्लियर फैमिली के मौजूदा दौर में हर मां-बाप को अपनी संतान के लिए नैतिक बोध की पाठशाला घर में चलानी होगी

3.तनहा लोगों की सुध :Problem of elders-isolation

आज समाज में बुजुर्ग अक्सर स्वयं को ऐसी स्थितियों में पाते हैं जहां वे अकेले होते हैं। यूं तो यह सच्चाई दुनिया भर के समाजों की है किंतु पहली बार एक राजनेता ने तनहाई की त्रासदी पर गंभीर अध्ययन और सर्वेक्षण किया। वह इस नतीजे पर पहुंचीं कि तनहाई व्यक्ति को हर महीने साढ़े चार सौ सिगरेट पीने के बराबर नुकसान पहुंचाती है।

Research in Britain

- ब्रिटेन की युवा सांसद जो. काक्स की अगुवाई वाले तनहाई कमीशन की रिपोर्ट अकेलेपन के खतरों को आगाह करने वाला वह दस्तावेज है, जिसने ब्रिटिश प्रधानमंत्री थेरेसा मे को तनहाई मंत्रालय

स्थापित करने और दुनिया में पहली बार अकेलेपन पर गंभीरतम सरकारी पहल के लिए बाध्य किया।

- दरअसल, ब्रिटेन में 90 लाख से अधिक लोग तनहाई का शिकार हैं। ब्रिटिश रेडक्रॉस सोसायटी के अनुसार बुजुर्ग ही नहीं, विकलांग और 17 से 25 साल के युवाओं, प्रवासियों और शरणार्थियों में तनहाई की प्रवृत्ति उल्लेखनीय है। प्रधानमंत्री थेरेसा ने ट्रेसी क्राउच को अकेलेपन की व्याधि से ब्रिटिश समाज को मुक्त कराने के अभियान की कमान सौंपी है।

India & Problem of Isolation

- अकेलापन भारत में भी एक दुखद वास्तविकता है। परिवार में सदियों पुरानी परंपराएं टूट रही हैं।
- मुंबई की एक पॉश सोसायटी में रहने वाली आशा साहनी के तनहाई और गुमनामी में जीते हुए कंकाल में बदल जाने की घटना बमुश्किल छह महीने पुरानी है। आशा के जीवन की इकलौती आस, उनका बेटा यूएस में इंजीनियर है। लोखंडवाला की पॉश सोसायटी में मौत की खामोशी वाले घर में वापसी से पूर्व एक साल तक उसकी अपनी मां से बात भी नहीं हुई थी। आशा साहनी की अकेलेपन में हुई मौत चेताती है कि भारतीय समाज की स्थिति ब्रिटेन से कहीं ज्यादा त्रासद हो सकती है क्योंकि यहां तो मनोवैज्ञानिक विशेषज्ञों की सलाह एक दुष्कर कार्य है
- 2017 में एजवेल फाउंडेशन की रिपोर्ट में कहा गया था कि अकेलेपन और रिश्तों की उदासीनता से 43 प्रतिशत बुजुर्ग मनोवैज्ञानिक समस्याओं के शिकार थे। ऐसे समाज में मोबाइल व अन्य इलेक्ट्रानिक डिवाइस के आभासी जगत में सोशल मीडिया को वास्तविक जीवन से अधिक तरजीह मिल रही है।
- घर-नाते के लोगों से मिलने-मिलाने, दोस्तों को गर्मजोशी से गले लगाने और किसी कारण से दुखी व निराश लोगों के दुख बांटने की जगह फेसबुक का लाइक बटन सुख का 'खुल जा सिमसिम' कोड बना हुआ है।

4.बच्चों में हिंसा का लावा क्यों फूट रहा है

आजकल बाल अपराध की वीभत्स घटनाएं सुर्खियां बन रही हैं। इससे भी बड़ी तकलीफ की बात यह है कि शिक्षा के मंदिर यानी स्कूल ही इन अपराधों का केंद्र बन रहे हैं। कुछ माह पहले गुड़गांव के रेयान स्कूल में परीक्षाएं टालने के लिए एक सीनियर छात्र द्वारा मासूम छात्र की हत्या ने सनसनी मचा दी थी। इसके बाद लखनऊ के ब्राइटलैंड स्कूल की एक छात्र ने छुट्टी कराने के लिए कक्षा एक के छात्र को लगभग अधमरा ही कर दिया। इस मामले की आग अभी शांत भी नहीं हुई थी कि हरियाणा के यमुनानगर में कक्षा 12 के एक छात्र ने अपनी प्रिंसिपल की गोली मारकर हत्या कर दी। रह-रहकर ऐसी घटनाएं सामने आ रही हैं जिनमें अपराध को अंजाम देने का काम किशोरों ने किया होता है। बहुत दिन नहीं हुए जब नोएडा के फ्लैट में एक किशोर ने मां और बहन की पीट-पीट कर हत्या कर दी थी।

सवाल उठता है कि आखिर ऐसे हालात पैदा क्यों हो रहे हैं?

अपराध की ओर खिसकता बचपन अब तमाम तरह के सामाजिक और मनोवैज्ञानिक सवालों के जवाबों की मांग करता है। ऐसा लगता है कि अमेरिकी और यूरोपीय बच्चों में पनपी हिंसा की संस्कृति अब तेजी से हमारे देश में भी पैठ बनाती जा रही है। हमारे नौनिहालों के मस्तिष्क में क्रोध, प्रतिरोध, प्रतिशोध और हिंसा के उठते ज्वार से जुड़े ज्वलंत प्रश्न समाज मनोवैज्ञानिकों को ही नहीं, बल्कि आमजन को भी मथ रहे हैं। यह

सच है कि छात्रों में सहपाठियों के बीच अनबन, गुस्सा, मारपीट, प्रेम और दोस्ती इत्यादि का प्रदर्शन अतीत से ही उनके जीवन का हिस्सा रहे हैं, परंतु हाल के कुछ वर्षो से बच्चों के मस्तिष्क में हिंसा का जो लावा फूट रहा है वह गंभीर चिंता का विषय है। वर्तमान में बच्चों के सामाजीकरण की प्रक्रिया और उससे विकसित हो रहे बाल मनोविज्ञान को गहराई से समझने की दरकार है।
जीवन में असफलता का भय बच्चों को हिंसक बना रहा है

- हमारे समाज में संयुक्त परिवारों ने लंबे समय तक भोगवादी आवश्यकताओं को संभाल रखा था, लेकिन टीवी और फिल्मों की तिलिस्मी दुनिया ने उसे एक बड़ी हद तक प्रभावित किया है।
- आज परिवार में बच्चों की जितनी जरूरतें पैदा हो रही हैं उनमें से तीन चौथाई बाजार और विज्ञापनों की देन हैं। इस सच्चाई से इन्कार नहीं किया जा सकता कि बाजार के फैलाव ने नई उपभोक्तावादी संस्कृति को जन्म देकर लोगों में दमित इच्छाओं का विस्फोट किया है।
- आज बच्चों से पारस्परिक और सघन सामाजिक संवाद करने के परिवार, स्कूल और दोस्त जैसे सभी साधन और माध्यम गौण हो गए हैं। कई हिंसक चरित्र उनके आदर्श बन रहे हैं।
- बच्चों में पनप रही इस हिंसा के मूल में वैश्विक संस्कृति से जुड़ी एक गलाकाट प्रतिस्पर्धा है। इस पीढ़ी में सफलता पाने की तीव्र इच्छा तो है, लेकिन असफल होने का धैर्य और संयम उनमें कमजोर पड़ रहा है। जिस कारण जीवन में असफलता का भय उन्हें हिंसक बना रहा है।
- बच्चों में आज साहसिक वैश्विक होड़ तो दिखाई पड़ती है, मगर ज्ञान और विवेक के तालमेल के अभाव में उनमें अदृश्य हिंसा का बीजारोपण भी तेजी से हो रहा है।
- समाजशास्त्रीय विश्लेषण बताते हैं कि संयुक्त परिवारों के टूटने से बच्चों का अकेलापन, मानसिक तनाव, व्यक्तिगत पहचान खो जाने के डर जैसे मामलों को एकल परिवार भी नहीं सुलझा पा रहे हैं।
- बच्चों का अधिकांश वक्त संचार माध्यमों अथवा सोशल मीडिया के संपर्क में रहने के कारण भी वे हिंसा के शिकार हो रहें हैं। अवसर आते ही बच्चों में यह दमित हिंसा कभी-कभी अपना रौद्र रूप धारण कर लेती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट बताती है कि दुनिया में हर वर्ष तकरीबन डेढ़ करोड़ लोग हिंसा की भेंट चढ़ जाते हैं। इनमें बच्चों और युवाओं की सहभागिता अधिक है। स्नेह के अभाव में बच्चे संवेदनाशून्य बनकर हिंसा की ओर बढ़ते चले गए
- इस रिपोर्ट का आश्चर्यजनक तथ्य यह भी है कि हिंसा में शामिल इन बाल एवं युवाओं में अधिकांश ऐसे थे जो अपने परिवारों में प्रत्यक्ष समाजीकरण से वंचित रह गए थे। इसका दुष्परिणाम यह रहा कि प्रेम, वात्सल्य और स्नेह के अभाव में बच्चे संवेदनाशून्य बनकर हिंसा से जुड़े लक्ष्यों की ओर बढ़ते चले गए।
- देखने में आ रहा है कि परिवारों में बच्चों से भावनात्मक रिश्ते छिन रहे हैं। एक बड़ी संख्या में माता-पिता को आर्थिक दबाव, कारोबार और भौतिकता से ही फुर्सत नहीं है। बच्चों को भौतिकतावादी सुविधाएं देकर आज वे अपनी सामाजिक भूमिका की इतिश्री समझ रहे हैं। लिहाजा बच्चे या तो घर की चहारदीवारी मे बंद होकर तकनीक के खिलौने से खेलते हैं या फिर कंप्यूटर एवं वीडियो के पर्दे पर किसी चरित्र को मारने का आनंद उठाते हैं। इन काल्पनिक चरित्रों को मार-मार कर पले-बढ़े बच्चे कई बार वास्तविक जीवन में भी ऐसा करने से नहीं चूकते। नगरों और महानगरों के विद्यालयों में अध्ययनरत इन हिंसक छात्रों में भी ऐसा मनोविज्ञान कार्य कर रहा है
- बच्चे संयम, सहनशीलता, चरित्र और अहिंसा के महत्व को खोते जा रहे हैं

आज बच्चे जिस हिंसा का प्रयोग अपने दोस्तों और सहपाठियों पर कर रहे हैं वह निश्चित ही उनकी कमजोर होती सहनशक्ति का परिचायक है। परिवार, शिक्षक और शिक्षा का जो त्रिपक्षीय संगम पहले व्यक्तित्व को सुरक्षा कवच प्रदान करता था, उसकी गरमाहट भी अब कम होती जा रही है। कई संचार माध्यमों ने बच्चों के कल्पनालोक और उनके यथार्थ में घालमेल करते हुए आक्रोश और हिंसा को केंद्र में लाकर लक्ष्य प्राप्ति का साधन बना दिया है। हिंसा अब बच्चों के सामान्य अनुभव का हिस्सा बनती जा रही है। संयम, सहनशीलता, चरित्र और अहिंसा जैसे मूल्य अपना महत्व खोते जा रहे हैं। लक्ष्यों की प्राप्ति में देरी उनसे बर्दाश्त नहीं हो रही है। इन बच्चों को हिंसा की गिरफ्त से बचाने के लिए आवश्यक है कि हम बच्चों के प्रति उदासीनता के भाव का देर किए बिना त्याग करें। साथ ही उनसे सघन पारिवारिक संवाद बनाते हुए उनके समक्ष श्रेष्ठ आदर्श प्रस्तुत करना समय की मांग है। साथ ही स्कूलों में शिक्षकों के रचनात्मक सहयोग एवं छात्रों के साथ उनकी सहभागिता से बच्चों में हिंसक प्रवाह को रोककर उनकी संचित ऊर्जा का सार्थक निवेश किया जा सकता है। यह सच है कि सोशल मीडिया के तेज बहाव को रोकना मुश्किल है, परंतु उससे आने वाली संक्रमित संस्कृति को परिवार, शिक्षा और शिक्षक के बीच सशक्त गठबंधन की पवित्रता आज भी बच्चों के हिंसक व्यवहार को रोकने और उनके सृजनात्मक व्यक्तित्व के निर्माण में पूर्ण सक्षम हैं। बस इन संस्थाओं को एक कदम आगे बढ़कर अपने दायित्व पूर्ति के निर्वहन करने की आवश्यकता है।

5.देश में बेटियों की इच्छा रखने वाले स्त्री-पुरुषों की संख्या में वृद्धि

National Sample Survey: 2005-06 में जहां सिर्फ 70 फीसदी महिला-पुरुष ही बेटियां चाहते थे, वहीं वर्तमान में करीब 79 फीसदी लोगों की चाहत है कि उनके परिवार में एक बेटी जरूर हो. इस बात का एक दिलचस्प तथ्य यह भी है कि पिछले एक दशक में बेटी चाहने वाली महिलाओं में जहां पांच फीसदी की ही बढ़ोतरी हुई है. वहीं ऐसे पुरुषों की संख्या अब 13 फीसदी ज्यादा हो गई है. लेकिन कुल मिलाकर अधिकतर वर्गों में बेटी चाहने वाली महिलाओं की संख्या अभी भी पुरुषों से ज्यादा है. यह सर्वे 49 साल तक की महिलाओं और 54 साल तक के पुरुषों के बीच किया गया है.

- इस सर्वे में यह भी सामने आया है. कि ग्रामीण इलाकों में बेटी की चाहत ज्यादा है. 75 फीसदी शहरी महिला-पुरुषों की तुलना में लगभग 80 फीसदी ग्रामीण महिला-पुरुष बेटियां चाहते हैं.
- इसके साथ ही एक और आश्चर्यजनक बात यह है कि साक्षरों की तुलना में निरक्षर महिला-पुरुष बेटे और बेटी में कम भेदभाव करते नजर आते हैं. अगर आंकड़ों में बात करें तो सिर्फ 73 प्रतिशत साक्षर महिला-पुरुष ही बेटी चाहते हैं, जबकि ऐसा चाहने वाले निरक्षरों का आंकड़ा 84 फीसदी है.

Why this change in thinking

- समाज में लड़कियों के खिलाफ चौतरफा बढ़ रही हिंसा के बावजूद बेटियों की बढ़ती चाह के पीछे जानकार कई कारण मानते हैं.
- एक तो बेटियां भी आजकल पढ़-लिखकर बेटों की तरह कमाने लगी हैं.
- दूसरा, भावनात्मक रूप से परिवार से ज्यादा जुड़े होने के कारण, शादी के बाद भी वे माता-पिता के साथ ज्यादा संपर्क बनाये रखती हैं.
- तीसरा, मांएं अक्सर ही बेटियों से अपने दिल की बातें शेयर कर पाती हैं बेटों से नहीं. यहां तक कि शादी के बाद भी वे अपने दिल की बात बेटियों से ही बांटती हैं. इस कारण अपना दिल हल्का करने के लिए भी महिलाएं कम से कम एक बेटी को जरूरी मानती हैं

Why rural urban Difference

शहरों की अपेक्षा गांवों में बेटियों की ज्यादा चाहत के पीछे जानकार दो मुख्य वजहें मानते हैं

- एक तो गांवों में महिलाएं पुरुषों की अपेक्षा ज्यादा शारीरिक श्रम करती हैं, जिसमें सिर्फ बेटियां ही उनका हाथ बांटती हैं. ज्यादा बेटियों का होना मां के लिये अंतहीन काम के बोझ से राहत का एक बड़ा जरिया हैं.
- दूसरा, ग्रामीण परिवेश लड़कियों के लिए अभी भी शहरों से ज्यादा सुरक्षित हैं, इस कारण भी उनकी सुरक्षा का मसला वहां उतना गंभीर अभी तक नहीं हुआ है जितना कि यह शहर के माता-पिताओं के लिये है.
- हालांकि परिवार में बेटियों के मुकाबले बेटा ज्यादा चाहने वाले महिला-पुरुषों की संख्या अभी भी 19 प्रतिशत है,जबकि बेटों से ज्यादा बेटियां चाहने वाले महिला-पुरुषों की संख्या महज 3.5 फीसदी ही है. समाज में बढ़ते एक बच्चे के चलन में अभी भी लोग बेटी की अपेक्षा बेटे को ही तरजीह देते हैं. लेकिन इस सबके बावजूद बेटियों की बढ़ती चाहने आने वाले समय के लिए एक सकारात्मक संकेत है.
- इस सर्वे में स्पष्ट तौर पर सामने आता है कि शहरी, ग्रामीण, निरक्षर या फिर साक्षर हर तबके की महिलाओं का प्रतिशत, बेटी चाहने वाले पुरुषों से ज्यादा है. ये आंकड़े उस धारणा को तोड़ते हैं जिसके तहत अक्सर ही यह सुनने में आता है कि औरतें ही औरतों की दुश्मन होती हैं इसलिए वे कन्या भ्रूणों का गर्भपात करा देती हैं. असल में ससुराल वालों के भयंकर दबाव और बेटी पैदा होने पर अपने साथ होने वाली प्रताड़ना के डर के चलते ही, अक्सर माएं कन्या भ्रूणों के गर्भपात के लिए तैयार होती हैं. अपवाद हो सकते हैं.
- घरेलू हिंसा, सार्वजनिक जगहों पर हिंसा, शारीरिक हिंसा, मानसिक हिंसा, भावनात्मक हिंसा और यौन हिंसा की जितनी घटनाएं महिलाओं के साथ होती हैं, उतनी पुरुषों के साथ नहीं होती. साथ ही घर-परिवार की इज्जत का पूरा भार तो लगभग महिलाओं पर ही होता है जिसके चलते वे हर समय एक पहरा सा महसूस करती हैं अपने ऊपर. घर-परिवार की इसी इज्जत की गठरी को संभालने के चक्कर में वे बहुत सारे मौकों पर मनचाहा नहीं कर पातीं. स्वेच्छा से जीने की जितनी और जैसी आजादी लड़कों को है, उतनी और वैसी आजादी लड़कियों को आज भी दूर-दूर तक नहीं मिली.
- मतलब जिंदगी को अपनी खुशी के हिसाब से जीने के न्यूनतम मौके महिलाओं को मिलते हैं. घर के भीतर प्यार और इज्जत पाने के लिए जितना लड़कियां तरसती हैं, उतना लड़के कभी भी नहीं तरसते, बल्कि यह कहना ज्यादा सही होगा कि लड़के जानते भी नहीं कि परिवार में प्यार न मिलने जैसी भी कोई चीज होती है. जितनी और जैसी उपेक्षा लड़कियों को कदम-कदम पर आजीवन मिलती है, वैसी लड़कों को एक दिन तो क्या कुछ घंटों के लिये भी नहीं झेलनी होती. इसी तरह कामकाजी महिलाओं के ऊपर घर, नौकरी और बच्चे के बीच सबसे बेहतर संतुलन का जितना दबाव है, वैसा पुरुषों पर कभी भी नहीं होता.

6. विरोधाभासों से भरा भारतीय समाज, गजब तरीके से हालात से सामंजस्य करने की क्षमता

भारतीय समाज अंतर्विरोधों से भरा समाज है। हालांकि वह दुनिया का सबसे बड़ा जनतांत्रिक समाज है, किंतु उसमें व्यावहारिक स्तर पर वंशवाद की सहज स्वीकारोक्ति है। पारिवारिक पेशा हो याराजनीति, वंशवाद से शायद ही किसी को परहेज हो। इस तरह उभरते जनतंत्र में सामंतवादी मूल्य एवं तौर-तरीके

भारतीय जनतंत्र को आकार देते हैं। भारतीय समाज गजब तरीके से हालात सेसामंजस्य करने की क्षमता से लैस है। वैसे तो सैद्घांतिक स्तर पर जनतांत्रिक मूल्यों और सामंती मूल्यों में कहीं भी समानता नहीं है, परंतु भारतीय समाज में ये दोनों दूध और पानी की तरह मिल गए हैं।इनके मिश्रण से ही भारतीय जनतंत्र की शक्ल ने आकार लिया है।

पश्चिमी समाज से नया संस्करण तैयार

पश्चिमी समाज में उभरा जनतंत्र जब एशियाई एवं मध्य पूर्व के देशों एवं समाजों में गया तो वहां के समाज की प्रकृति में उसने नया अवतार लिया यानी उसका नया संस्करण तैयार हुआ। इसी तरह भारतमें आज जो जन तंत्र है वह पश्चिमी जनतंत्र का भारतीय संस्करण है। आज भारतीय समाज आधुनिकता के दौर से गुजर रहा है। महानगरों, स्मार्ट सिटी, कस्बों, बाजारों का विस्तार अबाध गति से हो रहा है।भारत नई टेक्नोलॉजी का ए क बड़ा उपभोक्ता एवं बाजार बनकर उभरा है। बीते कुछ समय से नागर समाज कहीं तेजी से विकसित हो ता जा रहा है। सिविल सोसाइटी एवं समाज सुधारक एवं सेवाभावीसंस्थाओं का भी नेटवर्क लगातार विकसि त होता जा रहा है।

यूनिवर्सिटी, कॉलेज आदि नई आधुनिकता का माध्यम

यूनिवर्सिटी, कॉलेज आदि नई आधुनिकता का माध्यम बन रहे हैं, किंतु अगर हम सही अर्थों में देखें तो भारतीय समाज में आज भी अनेक प्राचीन मूल्य न केवल ठाठ से चल रहे हैं, बल्कि वे और सशक्तहोते भी दिख रहे हैं। जातिवाद, क्षेत्रवाद, संप्रदायवाद, वंशवाद आदि अनेक मूल्य इस आधुनिकता में अंतर्विरोध पैदा करते रहते हैं। जनतंत्र एवं जनतांत्रिक राजनीति में जातिवाद, क्षेत्रवाद एवं संप्रदायवादकी भूमिका सीधे तौर पर देखी जा सकता है। चुनावी विमर्शों में तो अनेक बार ये खुलकर दिखने लगते हैं। भारतीय राजनीति में अस्मिता बोध के अनेक आधार भी जाति, क्षेत्र एवं धर्म की ऐसी ही प्राक्आधुनिक पहचानों से जुड़कर हमारी जनतांत्रिक राजनीति में आकार ले रहे हैं। भारत एक जनतांत्रिक समाज तो है, लेकिन उसमें सामंती मूल्य का होना एक तरह का अंतर्विरोध सृजित कर रहा है। वहींदूसरी तरफ यह समाज आधुनिकता की तरफ बढ़ रहा है, किंतु अनेक प्राक् आधुनिक मूल्यों के साथ। यह दूसरी तरह का विरोधाभास है।

अहिंसक देश में भी दिखाई देती है हिंसा

- प्रसिद्ध इतिहासकार एवं चिंतक रणजीत गुहा कई साल पहले नीदरलैंड के एक शोध संस्थान में फेलो थे। मैं भी उन दिनों वहां फेलो के रूप में कार्यरत था। हमारे स्टडी रूम अगल-बगल थे। शाम कोहम घंटों बातें करते थे। एक बार उन्होंने कहा कि देखो यह कैसा अंतर्विरोध है? कहने को तो हम कहते हैं कि भारत अहिंसक देश है। अहिंसा के मूल्यों पर विश्वास करता है, किंतु अगर गहराई से देखें तोयहां के सामाजिक स्तरों में हिंसा की अनेक परतें दिखाई पड़ेंगी। हमारे समाज में कई बार बाप बेटे को पीटता है। पति पत्नी को पीटता है, आधिपत्यशाली कमजोर पर हिंसा करता है। हर शक्तिवानशक्तिहीन को हिंसा के माध्यम से ही नियंत्रित करना चाहता है। है न एक दुखद विरोधाभास। कहने को तो हम बुद्घ के उपदेशों की दुहाई देते हैं। अपने को गांधी का देश कहते हैं और अहिंसा कीमहत्ता को रेखांकित करते हैं, किंतु अनेक बार अपनी असहमति एवं विरोध हिंसा के माध्यम से ही प्रकट करते हैं। इस क्रम में कभी सरकारी संपत्ति को क्षति पहुंचाई जाती है,

कभी अपने से भिन्न मतरखने वाले को और कभी-कभी तो जो भी सामने मिल गया अर्थात अनजान लोगों को भी क्षति पहुंचा देते हैं। एक तरह से हिंसाजनित

- क्षति में ही हम अपनी समस्याओं की पूर्ति देखते हैं। हाल में गुरुग्राम में प्रद्युम्न हत्याकांड ने हमें यही बताया कि हिंसा छोटे बच्चों में भी कितने कुत्सित स्तर तक पहुंच गई है। इसकी भी अनदेखी नहीं कीजा सकती कि हाल में जब फिल्म पद्मावत का विरोध हो रहा था तो विरोधी फिल्मकारों के साथ-साथ अन्य ऐसे लोगों को भी क्षति पहुंचाने की धमकी दे रहे थे जिनका इस फिल्म से कोई लेना-देना ही नहींथा। हिंसा अनेक प्रकार की होती है। एक, प्रकट हिंसा और दूसरी, अदृश्य हिंसा। बातों से हिंसा, भावों से हिंसा, देह भाषा से हिंसा। हिंसा के अनेक रूप एवं ढंग हैं। प्रकट हिंसा के तो हम आंकड़े बनातेहैं, लेकिन अदृश्य हिंसा के संपूर्ण आंकड़े बनाना दुष्कर कार्य है। आधुनिकता की ओर हम जैसे-जैसे बढ़ रहे हैं, प्रत्यक्ष हिंसा के साथ-साथ अदृश्य एवं अप्रकट हिंसा के रूप बढ़ते जा रहे हैं। मूल्य एवंसिद्घांत के स्तर पर अहिंसक देश में हिंसा के बढ़ते प्रारूप हमें चिंतित करने चाहिए।
- जनतंत्र एवं जनतांत्रिक चुनाव के बाद भी भारतीय समाज में हिंसा बढ़ी है या यूं कहें हिंसा का राजनीतिकरण हुआ है। स्थानीय निकाय चुनावों से लेकर संसद के लिए होने वाले चुनाव में भी हिंसा केअनेक रूप पूरी प्रक्रिया के हिस्से के रूप में दिखाई देते हैं। किसी को वोट देने पर हिंसा, किसी को वोट न देने पर हिंसा, वोट के बाद विजय जुलूस के कारण हिंसा अर्थात विजय मनाने के क्रम में हिंसा। एक तरह से अनेक रूपों में हिंसा हमारी चुनावी प्रक्रिया का अंग बन गई है।

अंतर्विरोध के अनेक रूपों को अपने में समाहित कर आगे बढ़ रहा भारत

इसमें दोराय नहीं कि आज भारतीय समाज अंतर्विरोध के अनेक रूपों को अपने में समाहित कर आगे बढ़ रहा है। इतने अंतर्विरोधों को अपने में समाए भारतीय समाज फिर भी किसी भी तरह की टूट-फूट से अपने को बचाकर हजारों वर्षों से यात्रा कर रहा है। यही उसकी शक्ति है। शायद यहीं से 'आइडिया ऑफ इंडिया' उभरता है। इन अंतर्विरोधों में नकारात्मक एवं सकारात्मक, दोनों तरह कीप्रवृत्तियां पाई जाती हैं। हो सकता है कि इन अंतर्विरोधों के टकराव से भारतीय समाज में नया स्फुरण आए। सामाजिक विश्लेषण के अब तक के अनुभव के आधार पर कहें तो सामाजिक विकास के क्रममें अंतर्विरोधों से उत्पन्न होने वाली नकारात्मकता कमजोर होती है। देखना यह है कि इन अंतर्विरोधों में पाए जाने वाले नकारात्मक मूल्य आगे चलकर कमजोर होते हैं या नहीं? साथ ही हमें देखना यह भीहोगा कि राज्य एवं समाज, एक सम्यक एवं समानतापूर्ण समाज बनाने की दिशा में कैसे इन अंतर्विरोधों का सामना करता है?

7.मोबाइल की लत एक गंभीर स्वास्थ्य चुनौती बनती जा रही है

मोबाइल फोन की लत यानी 'मोबाइल फोन डिपेंडेंसी' के खतरे पर लंबे समय से बहस छिड़ी हुई है, लेकिन हाल ही में आई एक खबर सबके लिए चौंकाने वाली है. इस समय दिल्ली के सर गंगाराम अस्पताल में हरियाणा के एक नौ वर्षीय बच्चे इलाज चल रहा है, जो 'मोबाइल फोन डिपेंडेंसी' का शिकार है. इसे भारत में सबसे कम उम्र का 'मोबाइल फोन डिपेंडेंट' बताया जा रहा है. कुछ दिन पहले जब मां-बाप ने जबर्दस्ती इससे स्मार्टफोन ले लिया था तब इसने आत्महत्या करने की कोशिश की थी. बाद में यही असामान्य व्यवहार देखते हुए बच्चे को अस्पताल लाया गया.

Negative effects of Smart phones:

हालांकि परंपरागत मनोचिकित्सा विज्ञान के हिसाब से बच्चे की इस हालत का कोई औपचारिक नाम नहीं है. फिर भी पूरी दुनिया के मनोरोग विशेषज्ञ मानते हैं कि स्मार्टफोन, जो कि मनोरंजन उपलब्ध कराने से लेकर

रास्ता बताने जैसे कई कामों में उपयोगी हैं, के कुछ खतरनाक नकारात्मक असर हो सकते हैं. जेब में समा जाने वाले सूचना के अकूत भंडार का यह स्रोत आज हमारी जिंदगी में केंद्रीय भूमिका अदा कर रहा है, लेकिन साथ ही यह हमारी मानसिक और शारीरिक सेहत को भी प्रभावित कर रहा है. स्मार्टफोन के जरिए लोगों और सूचनाओं से ज्यादा से ज्यादा जुड़े रहने की चाहत ने इस इलेक्ट्रॉनिक डिवाइस की मानसिक जरूरत उस स्तर तक पहुंचा दी है, जहां इसके नतीजों को हल्के में नहीं लिया जा सकता.

- 2014 में राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य और स्नायु विज्ञान संस्थान (निम्हांस) ने एक अध्ययन कराया था. इसके मुताबिक इंटरनेट की लत का सबसे प्रचलित रूप मोबाइल फोन सर्फिंग की लत में देखा जा सकता है. अध्ययन का एक निष्कर्ष यह भी था कि 14 से 35 वर्ष के आयु वर्ग में आने वाले लोग इस लत का शिकार सबसे आसानी से बनते हैं.

Responsibility of Parents:

- बच्चों में 'मोबाइल फोन डिपेंडेंसी' की लत के लिए उनके अभिभावकों को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है. दरअसल ज्यादातर मां-बाप मोबाइल फोन या टैबलेट को बच्चों के लिए खिलौनों का विकल्प समझते हैं. वहीं दूसरी तरफ अगर कोई बच्चा टैबलेट का इस्तेमाल अपना होमवर्क करने में करता है तब उसका ध्यान इस इलेक्ट्रॉनिक डिवाइस में मौजूद कार रेसिंग या ऐसे ही दूसरे खेलों पर होना भी कोई असामान्य बात नहीं है. मनोरोग विशेषज्ञों के मुताबिक मोबाइल फोन की लत लगने में मां-बाप और बच्चों के इस व्यवहार का सबसे महत्वपूर्ण योगदान होता है.
- इस समय भारत में निम्हांस और सर गंगाराम अस्पताल जैसे कुछेक निजी संस्थानों को छोड़कर और कहीं यह सुविधा नहीं है जहां मोबाइल फोन की लत से जुड़े लक्षणों का इलाज किया जाता हो. इसलिए यह जरूरी है कि यह लत जनस्वास्थ्य के लिए खतरा बने इससे पहले दूरसंचार, मानव संसाधन और स्वास्थ्य मंत्रालयों को मिलकर इसके खिलाफ किसी रणनीति पर काम शुरू कर देना चाहिए.

8. हिंसक व्यवहार

दिल्ली में मामूली बातों पर आपा खोने और हिंसक व्यवहार करने की बढ़ती घटनाएं गंभीर चिंता का विषय हैं। आए दिन सामने आ रही ऐसी घटनाएं दर्शाती हैं कि लोग किस तरह तनाव में जी रहे हैं,उनमें जरा भी धैर्य नहीं है और वे दूसरों की छोटी सी गलती को भी बर्दाश्त करने को तैयार नहीं हैं। किसी सभ्य समाज में लोगों का ऐसा व्यवहार अस्वीकार्य है।

Recent context

दक्षिणी दिल्ली में विगत सोमवार शाम नेब सराय में रहने वाले एक डॉक्टर की मालवीय नगर जाने के दौरान रोडरेज में पिटाई की गई। पांच-छह युवकों ने कार छू जाने को लेकर उनकी कार का शीशा तोड़कर उन्हें बाहर खींच लिया और इतनी पिटाई की कि वह बेहोश हो गए।

ऐसी ही एक घटना मंगलवार को राजधानी के कंझावला इलाके में भी सामने आई, जब रास्ता देने को लेकर हुए विवाद में कार सवार चार बदमाशों ने मोटरसाइकिल सवार दो भाइयों को गोली मार दी। एक युवक की मौत हो गई, जबकि उसका भाई घायल हो गया।

दिल्ली में विगत कुछ वर्षों में इस तरह की घटनाएं बढ़ी हैं, जो समाज में बढ़ रही ऐसी गलत प्रवृत्ति को दर्शाती हैं।

Tracing the causes

- महानगर की तेज भागती जिंदगी और जल्दी-जल्दी सबकुछ पाने की होड़ के कारण बढ़ते तनाव के चलते दिल्लीवासियों में सहन करने की प्रवृत्ति खत्म होती जा रही है।
- पुलिस का डर न होना कोढ़ में खाज का काम कर रहा है।
- इसमें कोई शक नहीं कि लोगों में यदि पुलिस का खौफ हो, तो किसी की हत्या करना तो दूर की बात है, वे सड़क पर किसी से मारपीट से पहले भी कई बार सोचेंगे। लोगों की सुरक्षा पुलिस का दायित्व है।

What to be donw

- पुलिस को समय-समय पर अपनी कार्यप्रणाली की समीक्षा करनी चाहिए और अपनी खामियों को दूर करने का प्रयास करना चाहिए।
- अपराध छिपाने की कोशिश और मामले दर्ज न करने की प्रवृत्ति के चलते ही लोगों में पुलिस का खौफ नहीं रह गया है। स्थिति यह है कि पुलिसकर्मियों पर भी हमले होने लगे हैं।
- दिल्लीवासियों को तनाव कम करने के लिए अपने स्तर पर प्रयास करने चाहिए।
- लोगों को तनावमुक्त करने के लिए विभिन्न धार्मिक संस्थाओं को भी आगे आना होगा, तभी राजधानी बेहतर शहर बनेगी।

9.राह से भटकते युवा

Today's Youth

इसे सोशल मीडिया का कुप्रभाव कहें या फिर मां-
बाप से बच्चों को मिलने वाले संस्कारों की कमी कि आज की युवा पीढ़ी अपने पथ से भटकती हुई प्रतीत हो रही है।

- गुस्से से लबरेज इस पीढ़ी में संयम कम होता जा रहा है।
- शायद यह खान-पान का भी असर है कि छोटी-छोटी बात पर ही युवा पीढ़ी पूरी तरह से आग – बबूला हो जाती है और बिना कुछ सोचे समङो ऐसे कदम उठा रही है कि जिससे मां-बाप को संतापङोलना पड़ता है।

Recent news:

एक ऐसा ही मामला पंजाब में सामने आया जिसमें पहले दो बहनों ने घर से भागने के लिए योजनागत तरीके से अफवाह फैला दी कि सेल्फी लेते वक्त दोनों की नहर में गिरकर मौत हो गई है जबकि वेपहुंच गईं दिल्ली । वहां जब उनके पास पैसे खत्म हो गए तो वह अपना मोबाइल फोन बेचकर अमृतसर में अपने घर पहुंची। दरअसल दोनों लड़कियां फिल्मी कहानियों की तरह रातोंरात स्टार बनने के लिए नौकरी की तलाश में घर से भागी थीं लेकिन जब उन्हें हकीकत के थपेड़ों का सामना करना पड़ा तो उन्हें सिवाय घर केरास्ते के कोई और रास्ता दिखाई नहीं दिया।

Why this tendency

- यह सब इसलिए हो रहा है कि वर्तमान में इंसान की जिन्दगी पैसों की दौड़ में इतनी तेज भागने लगी है कि उसके पास अपने बच्चों के पास बैठकर बात करने का भी वक्त नहीं है।
- एकल परिवारों में मां-बाप के बाहर नौकरी पर जाते ही बच्चे खुद को घर पर अकेला महसूस करते हैं और उनके खाली दिमाग में कई तरह की खुरापात आने लगती हैं। यही कारण है कि बच्चों मेंगुस्सा बढ़ रहा है और किसी कक्षा में फेल हो जाने पर वह मां-बाप की जरा सी डांट पर खुद को फंदे पर लटकाकर परिजनों को जिन्दगी भर रोने के लिए छोड़ जाते हैं।

Joint family & Value system

पहले संयुक्त परिवार होते थे तो बच्चे घरों में बड़े-बुजुर्गो से संस्कार सीखते थे और उनमें सहनशीलता होती थी। परंतु आज की पीढ़ी पूरी तरह से सोशल मीडिया और टीवी में डूबी हुई है। जो वह वहां सेसीखती है

उसे ही अपने जीवन में अपनाने की कोशिश करती है। यह कहना भी गलत नहीं होगा कि बच्चों के इस तरह के आचरण के लिए कहीं न कहीं उनके माता-पिता भी दोषी हैं। वह अपने बच्चोंको मोबाइल तो थमा देते हैं परंतु यह चेक करना भूल जाते हैं कि वह मोबाइल का सदुपयोग कर रहे हैं या फिर दुरुपयोग। परिजनों को चाहिए कि वह बच्चों के लिए समय निकालें, उनके साथ बैठें उन्हेंउनके जीवन में अच्छी व बुरी बातों का बोध कराएं। बच्चों की बात को सुनें और उनकी समस्याओं का निवारण करें

10. जानलेवा खेल (Blue Whale)

भारत में हाल के दिनों में सुर्खियों में आया 'ब्लू ह्वेल' नामक Online खेल आज कई बच्चों के लिए जानलेवा साबित होने लगा है।

- इंदौर में राजेंद्र नगर के एक स्कूल में यह दूसरा मामला सामने आया, जिसमें तेरह साल के एक छात्र ने तीसरी मंजिल से छलांग लगा कर खुदकुशी की कोशिश की।
- जबकि हाल ही में मुंबई के अंधेरी इलाके में 'ब्लू ह्वेल' गेम खेलते हुए ही एक चौदह साल के बच्चे ने पांचवीं मंजिल से कूद कर जान दे दी थी।

Big Question:

सवाल है कि किसी Online खेल में मशगूल बच्चे आखिर किस मन:स्थिति में पहुंच जाते हैं कि उन्हें खेलने और जान दे देने में कोई फर्क नजर आना बंद हो जाता है! जिस खेल में खुदकुशी एक शर्त हो, उसे किस तरह खेल कहा जा सकता है?

करीब चार साल पहले रूस में 'ब्लू ह्वेल' गेम को बनाने का दावा करने वाले फिलिप बुदीकिन का कहना था कि समाज के लिए जैविक कचरा बन चुके लोगों की सफाई जरूरी है। इसी से अंदाजा लगाया जा सकता है कि वह किस तरह की बेहद खतरनाक मानसिक विकृति से भरा हुआ था। बाद में उसे गिरफ्तार कर लिया गया। लेकिन उसके बनाए इस खेल की चपेट में आकर दुनिया भर से अब तक ढाई सौ से ज्यादा बच्चों के जान गंवा बैठने की खबरें आ चुकी हैं।स्वाभाविक ही भारत में भी इसे लेकर चिंता पैदा हुई है।

Need to take action against such games:

इस खेल पर पाबंदी लगाने की मांग राज्यसभा में उठ चुकी है। बच्चों को आधुनिक तकनीक से लैस मोबाइल या ऐसे दूसरे साधनों की लत तो लगा दी गई है, पर उनमें यह समझ नहीं पैदा हो सकी है कि वे उनका उपयोग खुद को नुकसान पहुंचाने की कीमत पर न करें।

Technology and Human beings:

तकनीक से घिरी जिंदगी में कोई व्यक्ति समाज और मानवीय संवेदनाओं से कब कट जाता है, इसका अंदाजा उसे खुद भी नहीं होता। हाल के वर्षों में रोजमर्रा के जीवन को आसान बनाने में लोगों की निर्भरता जितनी तेजी से आधुनिक तकनीकी से लैस साजो-सामान पर बढ़ती गई है, उसी क्रम में धीरे-धीरे आसपास के लोगों और यहां तक कि रिश्ते-नाते या दोस्तों से भी दूरी बनती गई है। किसी बात या काम के लिए सीधे मेल-मुलाकात के बजाय लोग मोबाइल या फिर वाट्सऐप और फेसबुक जैसे सोशल मीडिया के जरिए मैसेज से बात करके काम चला लेते हैं।

परिवार के बाकी सदस्यों तक से आपसी संवाद की स्थितियां खो रहे हैं। घर में वयस्कों की जीवन शैली में आए इस बदलाव का सीधा असर बच्चों पर भी पड़ा है। जिस उम्र में बच्चों के स्वस्थ मानसिक विकास के लिए उनका हमउम्र साथियों के साथ खेलना-कूदना, हंसना-बोलना जरूरी होता है, वे हाथ में मोबाइल लिए या फिर कंप्यूटर में कोई कृत्रिम गेम खेल रहे होते हैं। खेल या व्यवहार में संवेदना के गायब होने का प्रभाव

बच्चों के कोमल मन-मस्तिष्क पर पड़ता है और वे गंभीर अवसाद के शिकार हो जाते हैं। उसी मानसिक स्थिति में उलझे बच्चों को 'ब्लू ह्वेल' जैसे खेल मौत तक खींच ले जा सकते हैं। इस खेल पर पाबंदी लगाई जाए या नहीं, इस पर दो राय हो सकती हैं, पर यह तो निश्चय ही कहना होगा कि बच्चों को आॅनलाइन गेम जैसी अमूर्तन की दुनिया में गुम होने से बचा कर मानवीय संवेदनाओं के साथ जीना सिखाया जाए

11. अदालती फैसलों का कितना असर: POCSO & IPC

नाबालिग पत्नी के साथ शारीरिक संबंध को दुष्कर्म माना जाए या नहीं? एक याचिका की शक्ल में सामने आए इस जटिल सवाल पर विचार करते हुए सुप्रीम कोर्ट इस नतीजे पर पहुंचा कि ऐसे संबंध न केवल दुष्कर्म के तहत आएंगे, बल्कि संबंध बनाना वाला पोक्सो कानून के तहत सख्त सजा का अधिकारी भी होगा

Provision in IPC

- कानून के अनुसार लड़की की शादी और आपसी रजामंदी से यौन संबंध बनाने के लिए न्यूनतम आयु 18 वर्ष निर्धारित की गई है, परंतु आइपीसी की धारा 375 (2) में दिए गए अपवाद के तहत 15से 18 साल की उम्र की पत्नी के साथ यौन संबंध बनाने पर पति को दुष्कर्म का दोषी नहीं माना जाता था।

What SC said

सुप्रीम कोर्ट के अनुसार जब 18 साल से कम उम्र की लड़की शादी नहीं कर सकती और सहमति के बावजूद यौन संबंध नहीं बना सकती तो फिर नाबालिग लड़की से विवाह की स्थिति में पति को छूट देना संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 21 (बराबरी और जीवन तथा व्यक्तिगत आजादी का अधिकार) के उल्लंघन के साथ-साथ महिला के अधिकारों का भी हनन है। हालांकि कानूननबाल विवाह निषेध है, लेकिन बावजूद इसके तथ्य यह है कि देश में 2 करोड़ 30 लाख नाबालिग लड़कियां शादीशुदा है। 2011 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार हिंदुओं में 31.3 प्रतिशत, मुस्लिमों में 30.6प्रतिशत, ईसाइयों में 12 प्रतिशत और सिखों में 10.9 प्रतिशत लड़कियों की शादी नाबालिग उम्र में हो गई। ऐसी स्थिति में यह कहना कठिन है कि सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले से नाबालिग विवाह पर रोक लगेगी।

Will it have retrospective effect?

यह अच्छी बात है कि नाबालिग विवाह के पुराने मामलों में सुप्रीम कोर्ट के फैसले का प्रभाव नहीं पड़ेगा, लेकिन यदि नाबालिग पत्नी द्वारा संबंध बनाने से इन्कार करने पर तलाक की नौबत आती है तो क्या राज्य सरकारें पीड़ित लड़कियों का पुनर्वास करने में सक्षम होंगी?

Other Questions

- एक सवाल यह भी है कि यदि नाबालिग लड़की विवाह उपरांत बच्चे को जन्म देती है तो नवजात की स्थिति क्या होगी? सुप्रीम कोर्ट ने अपने फैसले में कहा है कि पोक्सो कानून और जुवेनाइल जस्टिस एक्ट के अनुसार 18 साल से कम उम्र के किशोर-किशोरियों के साथ यौन संबंध अपराध है।
- पोक्सो की धारा-42 ए के विशेष कानून होने की वजह से यह अन्य कानूनों से ऊपर है। अपने देश में कानून के अनुसार 18 वर्ष के उम्र में लड़के वोट देने का अधिकार के साथ ड्राइविंग और कई राज्यों में शराब पीने का अधिकार हासिल कर लेते हैं, लेकिन शादी के लिए उनकी न्यूनतम आयु अभी भी 21 वर्ष है। अब अगर 18 वर्ष की लड़की 18 वर्ष से कम के लड़के के साथ ब्याह रचाए तो क्या होगा? क्योंकि लड़के की शादी की न्यूनतम उम्र तो 21 वर्ष है। क्या ऐसे मामलों में लड़की को भी पोक्सो कानून के तहत दोषी माना जा सकता है?
- सुप्रीम कोर्ट ने अपने फैसले में बाल विवाह के चलन जारी रहने संबंधी कई रपटों का जिक्र किया है। इन रपटों से यही साबित होता है कि छोटी उम्र में बच्चियों की शादी से उनके शरीर और मन पर बुरा प्रभाव पड़ने के साथ-साथ नवजात शिशुओं की मौत भी होती है।

- सुप्रीम कोर्ट के इस निष्कर्ष से असहमत नहीं हुआ जा सकता। उसका यह कहना भी सही है कि बाल विवाह को सरकार और सिविल सोसाइटी को सख्ती और जमीनी स्तर पर काम से रोकना होगा।

What is the solution

दरअसल होना तो यह चाहिए कि नाबालिगों की शादी होने ही न होने पाए। नाबालिगों की शादी एक सामाजिक बुराई है। इसे लोगों को जागरूक करके ही रोका जा सकता है, न कि नित-नए कानून बनाकर या फिर अदालती फैसलों के जरिये। इस फैसले के बाद यह तय माना जा रहा है कि बालिग दंपत्तियों के मामले में शारीरिक संबंध के दौरान जोर-जबरदस्ती को भी दुष्कर्म करार दिया जा सकता है। इस मामले में दिल्ली हाईकोर्ट में केंद्र सरकार ने अपना पक्ष रखते हुए कहा है कि वैवाहिक दुष्कर्म को अपराध बनाने से विवाह, परिवार और समाज की व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जाएगी। सरकारी की ऐसी दलील को महत्व मिलने के आसार अब और कम हो गए है। आखिर जब सुप्रीम कोर्ट के फैसले से नाबालिग लड़की को अपने शरीर पर खुद फैसला लेने का हक मिल गया और उससे संबंध बनाना दुष्कर्म की श्रेणी में आ गया तब फिर वैवाहिक दुष्कर्म को मान्य कैसे ठहराया जा सकता है? चूंकि सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया है कि नाबालिग विवाह में संबंध के मामले में उसका फैसला वैवाहिक दुष्कर्म पर टिप्पणी नहीं है इसलिए दिल्ली हाईकोर्ट के फैसले की प्रतीक्षा करनी होगी। इसके बावजूद इतना तो है ही कि अगर वैध विवाह में या बालिग दंपतियों में जबरन शारीरिक संबंध दुष्कर्म करार दिया जाता है तो यह एक तरह से बेडरूम में पुलिस की दखलंदाजी बढ़ाने वाला मामला होगा। सहमति से संबंध और जबरन संबंध में तो अंतर करना कठिन होगा ही, इस अंतर को साबित करना भी दुष्कर होगा।

बाल विवाह मामले में इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि ऐसे विवाह कानूनन निषेध होने के बावजूद हो रहे है। सुप्रीम कोर्ट को यह भी देखना चाहिए कि उसके तमाम फैसले निष्प्रभावी रहे है। उसने गुटखे पर पाबंदी लगाई थी, लेकिन वह पहले से ज्यादा धड़ल्ले से बिक रहा है। पटाखे बेचने पर पाबंदी के उसके फैसले के बारे में भी यह माना जा रहा है कि इससे पटाखों के चलन पर रोक लगना कठिन है, क्योंकि नियमन के तौर-तरीके नहीं अपनाए गए। तीन तलाक के फैसले के बाद भी यह सवाल उठा था कि आखिर जमीन पर इस फैसले का कितना असर होगा? बाल विवाह जैसी सामाजिक बुराई कानूनी मसला होने के साथ लैंगिक, जनसांख्यिकीय, स्वास्थ्य, शिक्षा का मुद्दा भी है। हर मामले में न्यायिक सक्रियता लोकतंत्र और समाज के लिए शुभ नहीं है। देश की सामाजिक परिस्थिति और यथार्थ को देखते हुए संसद ने नाबालिग लड़कियों को अपवाद के माध्यम से कानूनी सुरक्षा प्रदान किया था, जिसे बाल संरक्षण के नाम पर सुप्रीम कोर्ट ने एक झटके में रद करते हुए यह भी कह दिया कि अपवाद को खारिज करने से नया कानून नहीं बनता। येल विश्वविद्यालय के प्रोफेसर स्टीफेन कार्टर के अनुसार अभिजात्य न्यायिक व्यवस्था से सामाजिक क्रांति लाना मुश्किल है। सुप्रीम कोर्ट अपने कई आदेशों के माध्यम से कानूनी समाज बनाने की कोशिश कर रहा है, जबकि देश को कानून सम्मत बनाने की जरूरत है, ताकि कानून का सही पालन हो।

QUESTION:

GS PAPER I

महिलाओं की भूमिका और महिला संगठन

सर्वोच्च न्यायालय का बाल विवाह पर हाल ही का निर्णय के तर्क नहीं बल्कि इसके प्रभाव चिंता के विषय है | आलोचनात्मक मूल्यांकन करे

Not the reasoning but the implications of the recent ruling on child marriage are a cause for worry. Critically Evaluate

12. विवाद और सियासत

Padmavati & Controversy

फिल्म पद्मावती को लेकर शुरू हुआ विवाद बेवजह तूल पकड़ता जा रहा है। अब राजस्थान की मुख्यमंत्री वसुंधरा राजे सिंधिया ने केंद्रीय सूचना प्रसारण मंत्री स्मृति इरानी को पत्र लिख कर कहा है कि जब तक फिल्म के आपत्तिजनक हिस्सों को संपादित कर राजपूतों की मंशा के अनुरूप नहीं बना दिया जाता, उसके प्रदर्शन पर रोक लगा दी जानी चाहिए। उधर फिल्म के प्रदर्शन की तिथि भी टाल दी गई है। इसके प्रदर्शन की तारीख एक दिसंबर रखी गई थी और रविवार को दोपहर तक इसके निर्माता-निर्देशक इस बात पर अड़े हुए थे कि वे तय तारीख को इस फिल्म को परदे पर उतारेंगे, पर बाद में उन्होंने कहा कि अब फिल्म के प्रदर्शन की नई तारीख बाद में घोषित की जाएगी।

- केंद्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड ने भी अभी तक इसे प्रदर्शन का प्रमाण-पत्र नहीं दिया है।
- एक तो वह इस बात से नाराज है कि फिल्म निर्माता ने सेंसर बोर्ड का प्रमाण-पत्र मिलने से पहले ही इसके प्रोमो यानी प्रचार सामग्री को टेलीविजन चैनलों पर प्रसारित कर दिया और फिर निजी तौर पर कुछ पत्रकारों को मुंबई बुला कर फिल्म दिखाई और वे अपने माध्यमों पर इसकी तारीफ करने लगे। उसके बाद यह भी कहा कि फिल्म प्रदर्शन के लिए निर्माता-निर्देशक की तरफ से जरूरी कागजात उपलब्ध नहीं कराए गए, जिसके चलते उसे प्रमाण-पत्र देना संभव नहीं है। राजपूतों की करणी सेना लगातार इस फिल्म को लेकर विरोध प्रदर्शन कर रही है। उसका कहना है कि फिल्म किसी भी रूप में प्रदर्शित नहीं होनी चाहिए, क्योंकि उसमें 'उनकी महारानी' की छवि को धूमिल करने का प्रयास किया गया है। उन्होंने निर्माता का सिर कलम करने और पद्मावती का किरदार निभाने वाली अभिनेत्री दीपिका पादुकोण की नाक काटने तक की धमकी दे डाली।
- अभी तक राजस्थान की मुख्यमंत्री, जो कि खुद भी एक राजघराने से हैं, राजपूतों के इस प्रदर्शन पर मौन साधे हुई थीं, उन्होंने भी इसमें हस्तक्षेप करना अपना कर्तव्य समझा और केंद्रीय सूचना प्रसारण मंत्री को पत्र लिख दिया।
- पहले से कुछ लोग कयास लगा रहे थे कि जब तक गुजरात में विधानसभा चुनाव संपन्न नहीं हो जाते इस विवाद को चलाए रखा जाएगा। अब वही होता लग रहा है। इस कयास को बल इसलिए भी मिल रहा था, क्योंकि राजपूतों की करणी सेना राजस्थान के बजाय गुजरात में अधिक प्रदर्शन कर रही है। करणी सेना के मुखिया लंबे समय से गुजरात में डेरा डाले हुए हैं। इसलिए भी इस विरोध प्रदर्शन को गुजरात चुनाव से जोड़ कर देखा जा रहा है कि भाजपा को इसके जरिए हिंदू-मुसलमान मुद्दे को लहकाने में सुविधा मिल रही है।

विचित्र है कि फिल्म में जिस पद्मावती को लेकर राजपूतों ने विरोध प्रदर्शन करना शुरू किया, उसका कोई ऐतिहासिक साक्ष्य नहीं है। हिंदी कवि जायसी ने उसे अपने प्रबंधकाव्य 'पदमावत' में एक काल्पनिक पात्र के तौर पर रचा था और इसके पीछे उनका मकसद हिंदू-मुसलमानों के बीच सौहार्द स्थापित करना था। पद्मावती को लेकर दूसरी भाषाओं में पहले भी फिल्में बन चुकी हैं। पर हिंदी में जब उस काल्पनिक पात्र को लेकर संजय लीला भंसाली ने फिल्म बनाई, तो उस पर विवाद हो गया। ऐसे विवादों से फिल्मों की कमाई बढ़ने की संभावना बढ़ जाती है। पर इस फिल्म ने एक बार फिर इस बात पर गंभीरता से सोचने की जरूरत रेखांकित की है कि कलाओं को कहां तक अभिव्यक्ति की आजादी हासिल है और उन पर राजनीति करने का खमियाजा आखिर समाज को किस रूप में भुगतना पड़ता है।

14. अंतरजातीय शादियों में बढ़ोतरी: क्यों मुख्यधारा की राजनीति के चाहे बिना नहीं हो सकती

बाबा साहेब अंबेडकर के महापरिनिर्वाण दिवस की पूर्व संध्या पर केंद्र सरकार ने अंतरजातीय शादियों को आर्थिक प्रोत्साहन देने वाली योजना में पांच लाख रुपये की सालाना आय की सीमा खत्म करने का फैसला किया है.

What was the Scheme

- 'डॉक्टर अंबेडकर स्कीम फॉर सोशल इंटिग्रेशन थ्रू इंटर कास्ट मैरिज' नाम की इस योजना के तहत उन दंपतियों को ढाई लाख रुपये दिए जाते हैं जिनमें से कोई एक दलित समुदाय का हो.
- 2013 में शुरू की गई इस योजना का मकसद बिलकुल सीधा है : ज्यादातर लोग जो जाति से बाहर शादी करते हैं उन्हें सामाजिक बहिष्कार का सामना करना पड़ता है और ऐसे में सरकार द्वारा मिली आर्थिक मदद रूढ़िवादी समाज से बाहर उन्हें अपना नया जीवन शुरू करने में मददगार साबित होती है|
- केंद्र के अलावा अंतरजातीय शादियों को बढ़ावा देने वाली ऐसी ही योजनाएं कई राज्य सरकारें भी चला रही हैं. लेकिन आंकड़े बताते हैं कि इन योजनाओं का असर बहुत ही सीमित है. राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (एनएफएचएस-3) (2005-06) के मुताबिक देश में सिर्फ 11 प्रतिशत शादियां अंतरजातीय थीं.

Analysis

- देश में आज भी बहुसंख्यक लोग अपनी रिश्तेदारियां जाति में ही करना चाहते हैं. यह इस लिहाज से बुरा संकेत है कि इससे सामाजिक रुढ़िवादिता को बढ़ावा मिलता है. बुनियादी तौर पर शादी नाम का यह सामाजिक संस्थान जाति व्यवस्था को कायम रखने और मजबूत करने का काम करता है. इसीलिए बाबा साहेब अंबेडकर ने लिखा था, 'जाति तोड़ने का असली उपाय है अंतरजातीय शादियां. इसके अलावा और कुछ नहीं.' अंबेडकर का मानना था कि यही एक तरीका है जिससे जातियां विघटित होंगी. महात्मा गांधी शुरू में वर्ण व्यवस्था के समर्थक थे. लेकिन बाद के सालों में उन्होंने यह नियम बना दिया था कि उनके आश्रम में सिर्फ वही अंतरजातीय हो सकती हैं जिनमें वर या वधु दलित समुदाय से हो.
- इस गणतंत्र की स्थापना करने वाले हमारे पुरखों की सोच बिलकुल साफ थी कि जाति व्यवस्था खत्म होनी चाहिए. लेकिन सवाल है कि आखिर इस मकसद को हासिल कैसे किया जाए? श्रीनारायण गुरु से लेकर अंबेडकर, पेरियार, ईवी रामास्वामी और राममनोहर लोहिया तक मानते थे कि दमित जातियों का राजनीतिक सशक्तिकरण जाति व्यवस्था खत्म करने की दिशा में पहला कदम है.
- देश में चले जाति-विरोधी राजनीतिक आंदोलनों का जोर इस पर रहा है कि निचली जातियां मजबूती से अपनी अस्मिता का झंडा बुलंद करें. फिर इसे जाति विरोधी राजनीतिक लामबंदी की तरह से पेश भी किया गया. जाति व्यवस्था के खिलाफ इस लड़ाई में अंतरजातीय शादियों को एक महत्वपूर्ण हथियार माना गया था. लेकिन इस हलचल के बीच सतह के नीचे कहीं इन आंदोलनों का मकसद गुम हो गया. चुनावी राजनीति में एक दूसरे से प्रतिस्पर्धा कर रही जातियों को अब लोहियावादी और अंबेडकरवादी संख्याबल के आधार पर आंकते हैं और अब इसी आधार पर राजनीतिक मोलभाव होता है.
- पहले निचली जातियां जोरदार तरीके से अपनी अस्मिता की बात करती थीं लेकिन अब इनमें एक जातिगत गौरव की भावना आ रही है. इससे जाति व्यवस्था और मजबूत हो गई है. यही वजह है

कि आज अंतरजातीय विवाह किसी भी मुख्यधारा की पार्टी के राजनीतिक एजेंडे में नहीं हैं. और इससे बुरी बात यह है कि आज राजनेता इस मामले में ज्यादा रुढ़िवादी पक्ष की ओर खड़े दिखना चाहते हैं. यह एक तरह से विवाह के जरिए जाति व्यवस्था को संरक्षण देने की कवायद है.

15. महिला-पुरुष अंतर को पाटने के लिए तय करना होगा लंबा सफर

वैश्विक उद्यमिता सम्मेलन अपने मुख्य विषय- 'महिलाएं सबसे पहले, सभी के लिए समृद्धि' पर खरा उतरा है। इस सम्मेलन में आमंत्रित 1,500 उद्यमियों में महिलाओं की तादाद पुरुषों से अधिक थी। हर किसी ने बहुत से वादे किए और सफलता की बहुत सी कहानियां साझा की गईं। ऐसा होना बहुत उत्साहवर्धक है क्योंकि ऐसे सम्मेलन उद्यमियों के सामने आने वाली दिक्कतों के बारे में जागरूकता पैदा करने में मदद करते हैं।

लेकिन सम्मेलन का असली माहौल इवांका ट्रंप ने बनाया, जिन्होंने महिलाओं की ताकत की प्रशंसा करते हुए उनकी वास्तविक तस्वीर पेश की। उन्होंने कहा कि भारत जैसे देशों में स्त्री-पुरुष समानता के लिए कार्यबल में महिलाओं की भागीदारी को सुधारने की जरूरत है, लेकिन खुद अमेरिका भी इस समस्या से जूझ रहा है। अमेरिका में केवल 13 फीसदी इंजीनियर और 24 फीसदी कंप्यूटर विज्ञान पेशेवर महिलाएं हैं।

India and women Entrepreneur

¬ नैशनल सैंपल सर्वे ऑर्गनाइजेशन (एनएसएसओ) के मुताबिक भारत में केवल 14 फीसदी व्यवसायों को महिला उद्यमी चला रही हैं। हालांकि इनमें से ज्यादातर छोटे कारोबार हैं, लेकिन 80 फीसदी उनके खुद के पैसे से चल रहे हैं।

¬ वर्ष 2015 में वैश्विक उद्यमिता एवं विकास संस्थान ने एक रिपोर्ट जारी की थी, जिसमें उसका महिला उद्यमिता सूचकांक पेश किया गया था। इस सूचकांक में देशों को उन स्थितियों के आधार पर क्रम (रैंकिंग) दिया गया था, जो महिला उद्यमिता के विकास की संभावनाएं बढ़ाएंगी। इस सूचकांक में भारत पैंदे के आसपास था, जिसे 77 देशों की सूची में 70वां स्थान मिला था। वर्ष 2017 में मास्टरकार्ड ने महिला उद्यमिता का अपना सूचकांक जारी किया, जिसमें 54 देशों की सूची में भारत 49वें पायदान पर था।

¬ मैकिंजी की रिपोर्ट में पाया गया है कि पूरे विश्व की कामकाजी आबादी में 50 फीसदी हिस्सेदारी होने के बावजूद महिलाओं का वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में योगदान 37 फीसदी ही है। लेकिन यह वैश्विक औसत भौगोलिक क्षेत्रों में भारी अंतर को ढक देता है। उदाहरण के लिए भारत के जीडीपी में महिलाओं का हिस्सा महज 17 फीसदी है।

Causes of this Gender gap

इस लैंगिक खाई की वजह कई हैं।

- कार्यस्थल पर महिला-पुरुष भेदभाव और महिलाओं को कौशल मुहैया कराने के लिए कमजोर बुनियादी ढांचे के अलावा खुद महिलाओं में भी अपनी क्षमताओं को लेकर जागरूकता की कमी है।
- इसमें सामाजिक बेडिय़ां भी कम जिम्मेदार नहीं हैं। बहुत सी महिलाओं को अपना कारोबार शुरू करने से पहले अपने नजदीकी लोगों के विरोध का सामना करना पड़ता है।
- अन्य लोगों का कहना है कि भारत में बहुत सी महिलाएं कुछ अवसरों को भुनाने की क्षमता नहीं रखती हैं क्योंकि उनके पास व्यावहारिक कुशलता नहीं होती है। उदाहरण के लिए वे अपना

कारोबारी मॉडल निवेशकों के सामने नहीं रख पाती हैं। हालांकि ऐसा होना संभव है क्योंकि अगर वे किसी एक ऐसे परिवार से नहीं आई हैं, जिसका अपना कारोबार है या उन्होंने किसी उद्यम में काम नहीं किया है तो महिला उद्यमियों का कोई रोल मॉडल नहीं होगा और उनके पास कारोबार को शुरू करने, चलाने और बड़ा बनाने का कोई ज्ञान नहीं होगा।

Solution

- इस कमी को परामर्श कार्यक्रम पूरा कर सकता है। इसके अलावा बहुत से अध्ययनों में यह पाया गया है कि उभरते बाजारों में महिलाओं को ऋण लेने में पुरुषों से ज्यादा दिक्कत झेलनी पड़ती है और उन्हें अपने धन पर निर्भर रहना पड़ता है। विकासशील देशों में महिलाओं के स्वामित्व वाले लघु एवं मझोले कारोबारों में से 70 फीसदी को पूंजी नहीं मिल पाती है।
- इसी वजह से आईएफसी जैसे संगठन आगे आए हैं। भारत में सभी सूक्ष्म ऋणों में से करीब आधे आईएफसी से जुड़े सूक्ष्म वित्त संस्थानों द्वारा मुहैया कराए जाते हैं और कर्ज लेने वाले उनके 4 करोड़ ग्राहकों में से ज्यादातर महिलाएं हैं। इसके अलावा आठ लघु वित्त बैंक आईएफसी के साझेदार हैं और उससे निवेश हासिल करते हैं। उनमें से सभी सूक्ष्म वित्त मॉडल की तरह कर्ज लेने वाली महिला ग्राहकों पर ध्यान केंद्रित करेंगे।
- भारत में आईएफसी ने वितरकों के रूप में महिलाओं को ध्यान में रखते हुए सौर उत्पादों का बाजार तैयार किया है। देश में 40 करो लोगों को बिजली की उपलब्धता नहीं है। आईएफसी ने स्वच्छ ऊर्जा उत्पाद कंपनी फ्रंटियर मार्केट्स के साथ करार किया है ताकि स्व-सहायता समूहों से नियुक्त की गईं स्व-रोजगार महिलाओं का एक नेटवर्क विकसित किया जा सके। ये महिलाओं द्वारा चलाए जा रहे समूह पैसा और तकनीक मुहैया कराते हैं ताकि गांवों की महिलाएं अपने जीवन स्तर में सुधार ला सकें और खुद का काम-धंधा शुरू कर सकें।
- वर्ष 2016 में नेटवर्क में महज 250 महिलाएं शामिल थीं, जबकि 2020 तक महिला वितरकों की संख्या बढ़कर 20,000 होने की संभावना है। अगर भारत महिलाओं की कम वेतन और कम कौशल वाले रोजगार पर निर्भरता खत्म करना चाहता है तो उसे ऐसे कई कदम उठाने होंगे। दरअसल भारत में कनिष्ठ से मध्यम स्तर के पदों पर महिलाओं की संख्या में तेजी से गिरावट आ रही है।यह रुझान अन्य एशियाई देशों से अलग है, जहां मध्यम से वरिष्ठ स्तर के पदों पर महिलाओं की संख्या तेजी से घट रही है। आंकड़े यह भी दर्शाते हैं कि करीब एक-तिहाई महिला कर्मचारी बच्चे की परवरिश के लिए घर से मदद न मिलने के कारण फिर से नौकरी शुरू नहीं कर पाईं। करीब 80 फीसदी योग्य महिला स्नातक संगठित कार्यबल में शामिल नहीं होने या अपना कारोबार शुरू करने का फैसला ही नहीं लेती हैं

16. अंतरजातीय विवाह से मिटेंगे जातिगत पूर्वाग्रह

समाज में जाति के आधार पर होन वाले भेदभाव और विभाजन को दूर करने में अंतरजातीय विवाह काफी मददगार हैं। समाज में जैसे- जैसे अंतरजातीय विवाहों की संख्या बढ़ेगी वैसे ही धीरे-
धीरेजातिगत पूर्वाग्रह कम होते जाएंगे।

- केंद्र सरकार ने सामाजिक समरसता को बढ़ावा देने के लिए दलित युवक या युवती से विवाह करने पर सरकार से मिलने वाली आर्थिक सहायता के लिए अधिकतम आय की सीमा हटा ली है। इससेअंतरजा तीय विवाहों को बढ़ावा मिलेगा और अधिक से अधिक लोगों को इसका फायदा मिल सकेगा।
- वर्ष २०१३ में **डॉ. अंबेडकर स्कीम फॉर सोशल इंटीग्रेशन थ्रू इंटरकास्ट मैरिज** के नाम से यह योज ना शुरू की गई थी। सरकार चाहती थी इस योजना के जरिए अंतरजातीय विवाह करने वालों कोबढ़ावा मिले और उन्हें इस योजना के जरिए आर्थिक संबल भी मिले। पर इस योजना के तहत आर्थिक सहायता

प्राप्त करने के लिए आय पांच लाख से अधिक न होने की शर्त लगा दी गई थी जिसकेकारण बहुत से नव विवाहित जोड़े इस योजना का लाभ नहीं ले पाते थे।

कुछ लोग अधिकतम आय सीमा समाप्त करने के समय को लेकर सवाल उठा रहे हैं और इसे चुनावी राज नीति से जोड़ रहे हैं जो उचित नहीं है। समाज में जातिगत भेदभाव दूर करने और समरसता,भाईचारे को ब ढ़ाने वाली चीजों को तो कम से कम राजनीति से दूर ही रखा चाहिए। इससे संपूर्ण समाज को फायदा होगा। समाज में जाति के आधार पर भेदभाव हो रहा है या जाति के आधार पर समाजविभाजित है, उस भेदभाव और विभाजन को दूर करने में अंतरजातीय विवाह काफी मददगार हैं।

समाज में जैसे- जैसे अंतरजातीय विवाहों की संख्या बढ़ेगी वैसे ही धीरे-धीरे जातिगत पूर्वाग्रह कम होते जाएंगे। इसलिए समाज को होने वाले फायदे को राजनीतिक चश्में से देखना गलत है। जहां तक इसकदम से गुजरात चुनाव में राजनीतिक फायदा लेने या दलितों को राजी करने के प्रयास की बात है तो वो जमीनी सच्चाई से दूर है। दलित कोई जाति नहीं है बल्कि यह जातियों का समूह है। इसमें कईजातियों शामिल होती हैं और हर जाति की अपनी- अपनी समस्याएं और मुद्दे होते हैं जिनके आधार पर वे वोट करती हैं।

एक मुद्दे पर सभी जातियां शायद ही कभी वोट करती हों। इसलिए राजनीतक समर्थन पाने के लिए कार्य करने की बात गलत है। यह समाज के हित में लिया गया फैसला है और इसे उसी दृष्टि से देखाजाना चाहिए। इस फैसले पर राजनीतिक बहस करने की बजाए सामाजिक बहस होनी चाहिए कि आखिर ऐसे फैसले क्यों लेने पड़ रहे हैं? हमारा समाज इनको स्वीकारने के लिए कितना तैयार है? क्योंअंतरजातीय विवाह कम संख्या में हो रहे हैं? समाज में अंदर तक बैठी हुई जातिगत मानसिकता को दूर करने जैसे मुददों पर बहस का समय है।

GEOGRAPHY

1.Himalaya से निकलने वाली 60 फीसदी जलधाराएं सूखने के कगार पर

- पर्यावरण में आ रहे बदलावों के मद्देनजर नीति आयोग की एक चिंताजनक रिपोर्ट आई है
- इस रिपोर्ट में कहा गया है कि हिमालय से निकलने वाली 60 फीसदी जलधाराएं सूखने के कगार पर हैं.
- इन्हीं जलधाराओं से गंगा और यमुना जैसी नदियां बनती हैं.
- नीति आयोग के विज्ञान और तकनीकी विभाग की रिपोर्ट के मुताबिक इन जलधाराओं में अब पानी आता भी है तो बरसात के मौसम में. आयोग का कहना है कि हिमालयी क्षेत्र से निकलने वाली इन जलधाराओं की संख्या में भी कमी आई है.
- इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि अकेले उत्तराखंड में ही बीते 150 साल में ऐसी धाराओं की संख्या 360 से घटकर 60 तक आ गई है. आयोग ने करोड़ों लोगों के सामने जल्द ही पानी का संकट खड़ा होने की चेतावनी देते हुए इस संबंध में उपाय करने का सुझाव भी दिया है.

2. दो अलग-अलग टाइम जोन

In news:

भारत के पूर्वी और पश्चिमी हिस्से में सूर्योदय और सूर्यास्त के समय का अंतर देखते हुए केंद्र सरकार ने देश को दो अलग-अलग टाइम जोन में बांटने पर विचार करने की बात कही है.

Argument in favour

मुख्य भूमि से अलग अंडमान-निकोबार द्वीप समूह और लक्षद्वीप के बीच सूर्योदय और सूर्यास्त में लगभग दो घंटे का अंतर रहता है. अगर टाइम जोन को 30 मिनट आगे कर दिया जाए तो 2.7 अरब यूनिट बिजली की बचत की जा सकती है क्योंकि कार्यालय अंधेरा बढ़ने से पहले बंद होने लगेंगे.

What is time zone

- टाइम जोन का मतलब भारत के मानक समय की गणना से है, जिसका निर्धारण 82.5 डिग्री पूर्वी देशांतर से किया जाता है.
- यह रेखा उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद से गुजरती है. बीजद सांसद ने इसे 90 डिग्री पूर्वी देशांतर करने का सुझाव रखा है, जो असम और पश्चिम बंगाल की सीमा से गुजरेगी.
- इससे समय में आधे घंटे का इजाफा हो जाएगा.

विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय ने 2003 में इस बात का अध्ययन कराया था कि दो टाइम जोन बनाने से बिजली की खपत पर क्या असर पड़ेगा. फिलहाल दुनिया में रूस में सबसे ज्यादा 11 और अमेरिका में नौ टाइम जोन हैं. वहीं, भौगोलिक विस्तार होने के बावजूद चीन और भारत एक-एक टाइम जोन का ही इस्तेमाल कर रहे हैं.

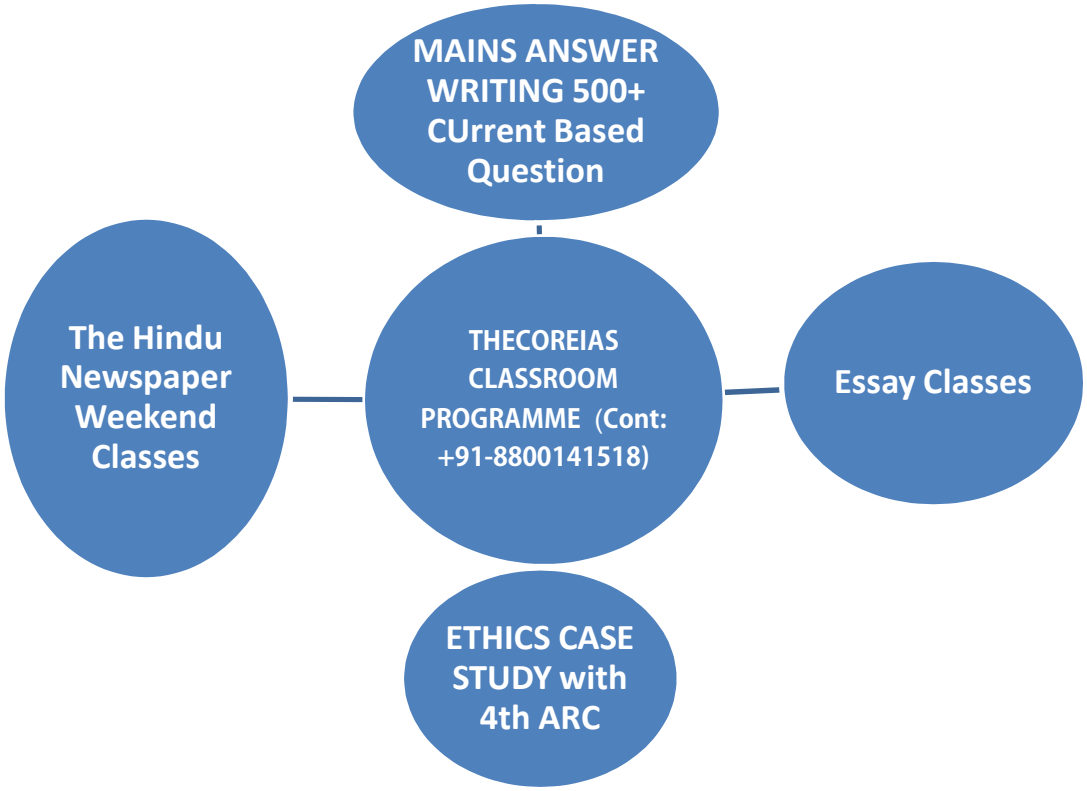

3.

3.सतर्कता के संकेत:भूकंप

नेशनल सेंटर फॉर सिस्मोलॉजी ने आगाह किया है कि देश के 29 शहर भूकंप की दृष्टि से खासे संवेदनशील हैं। इनमें नौ राज्यों की राजधानी व हिमालयी क्षेत्र के राज्य हिमाचल, उत्तराखंड, जम्मू कश्मीरव पूर्वोत्तर के राज्य शामिल हैं।

- एनसीएस ने भारतीय मानक ब्यूरो के भूकंप के रिकॉर्ड, टेक्टॉनिक गतिविधियों तथा सघन जनसंख्या वाले इलाकों में भूकंप से संभव क्षति के आकलन की दृष्टि से संवेदनशील इलाकों को दो और पांचके भूकंपीय क्षेत्र में बांटा है।
- • एक तरह से यह शासन-प्रशासन को सचेत रहने की नसीहत है ताकि भूकंप आने की स्थिति में जन-धन की क्षति को टाला जा सके।
- रिपोर्ट में दिल्ली, पटना, श्रीनगर, कोहिमा, पुडुचेरी, गुवाहाटी, गंगटोक, शिमला, देहरादून, इंफाल और चंडीगढ़ को संवेदनशीलता के नजरिये से भूकंपीय क्षेत्र दो और पांच के बीच बांटा गया है।
- ज्यादा संवेदनशीलता के चलते बिहार, उत्तराखंड, जम्मू-कश्मीर, रण का कच्छ इलाका, अंडमान निकोबार व हिमाचल प्रदेश को जोन पांच में शामिल किया गया है।
- इस सर्वेक्षण का मकसद शासन-प्रशासन को सजग-सतर्क बनाने के अलावा जनता को भूकंप की आपदा के प्रति जागरूक बनाना है।

Fault on seismic front

- देश में भूकंप के प्रति वैज्ञानिक सोच का विकास हो ही नहीं पाया।
- भवन निर्माण शैली में भूकंपरोधी तकनीक का इस्तेमाल न के बराबर हुआ है।
- सरकार की ओर से कोई मानक भूकंपरोधी आवास को लेकर विधिवत जारी नहीं किये गये हैं।
- स्थानीय स्तर पर भी निगरानी करने वाली संस्थाएं मकानों के नक्शे पास करते वक्त उपलब्ध
- मानकों को लागू करने की दिशा में गंभीर नजर नहीं आती।
- वास्तव में भूकंप नहीं, बल्कि अनियोजित निर्माण व निर्माण सामग्री की गुणवत्ता में कमी नुकसान का का रण बनती है।
- देश में गरीबी व संसाधनों की कमी के चलते आम लोग आनन-फानन में किसी तरह घर बना लेते हैं।
- उनकी प्राथमिकता छत होती है। जबकि थोड़ी अधिक लागत से भूकंपरोधी आवास बनाये जा सकते हैं। सरकार के स्तर पर कम लागत वाले सर्वमान्य मानक तैयार करने की गंभीर पहल नहीं हुई।
- फिर जो जानकारी उपलब्ध है उसका क्रियान्वयन नहीं हो पाता।
- अनियोजित
  विकास और आपदा की स्थिति में बचाव के लिये चौड़ी सड़कों का अभाव और राहत का ढांचा उपलब्ध न होना भी चिंता की बात है।
- जरूरत इस बात की है कि देश में भूकंप से बचाव की तकनीक आम आदमी तक पहुंचाई जाये। लोगों को बताना चाहिए कि किन परिस्थितियों में जनधन की हानि को टाला जा सकता है

4. ग्रामीण विकास से मिटेगी भूख

आप्रवासन की बढ़ती हुई चुनौती वैश्विक स्तर पर आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक नीतियों को आकार देने के लिहाज से महत्वपूर्ण निर्धारक है। भले ही प्रवास आर्थिक एवं सांस्कृतिक लाभ का स्रोत रहा है, लेकिन हाल के वैश्विक रुझान खाद्य सुरक्षा के अभाव और संघर्षों के कारण विस्थापन को मजबूर आबादी के उपहास का संकेत करते हैं। प्रवासियों का एक बड़ा हिस्सा ग्रामीण क्षेत्रों से आता है,जहां दुनिया की 75 फीसदी से ज्यादा आबादी गरीब है और आजीविका के लिए कृषि एवं अन्य प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर होने के कारण खाद्य असुरक्षा का शिकार है। यही वजह है कि संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन

(एफएओ) ने इस वर्ष विश्व खाद्य दिवस के अवसर पर (जो 16 अक्तूबर को मनाया जाता है) नारा दिया है- **'प्रवासियों का भविष्य बदलें, खाद्य सुरक्षा और ग्रामीण विकास में निवेश करें।'**

Migration towards Cities

शहरी केंद्रों की तरफ प्रवास एक महत्वपूर्ण प्रवृत्ति है, जो निकट भविष्य में खाद्य सुरक्षा और पोषण को स्वरूप प्रदान करेगा। हमारे यहां शहरी आबादी में वार्षिक परिवर्तन की दर वैश्विक औसत से अधिक है, जो आंतरिक प्रवास की तीव्र गति का संकेत करता है। अनुमान है कि वर्ष 2050 तक भारत की पचास फीसदी से ज्यादा आबादी शहरी क्षेत्रों में निवास करेगी। वैश्विक स्तर पर तीन देश-चीन,भारत और नाइजीरिया- में शहरी आबादी में 2050 तक नब्बे करोड़ की बढ़ोतरी होगी। चूंकि भारत में मुख्यतः ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में प्रवास होता है, इसलिए भविष्य में हमें कृषि विकास और वैश्विक खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए शहरी क्षेत्रों के विस्तार के तरीकों को प्रबंधित करना होगा।

Food security & Agriculture

खाद्य सुरक्षा हासिल करने के लिए कृषि उत्पादन महत्वपूर्ण है, क्योंकि करीब 99 फीसदी खाद्य की आपूर्ति कृषि से होती है। दूसरी तरफ कृषि पहले से ही पर्यावरणीय क्षरण, जलवायु परिवर्तन एवं गैर-कृषि गतिविधियों में भूमि के उपयोग के कारण संकट की स्थिति में है। इसके अलावा प्रवासन के कारण आबादी के केंद्रों में बदलाव ने कुपोषण को तीन तरह से बढ़ा दिया है-भूख का सह अस्तित्व (आहार ऊर्जा जरूरतें पूरी करने के लिए अपर्याप्त कैलोरी का सेवन), कम पोषण (मैक्रो और सूक्ष्म पोषक तत्वों का लंबे समय तक अपर्याप्त सेवन) और अधिक वजन या मोटापे के रूप में अति पोषण। शहरी क्षेत्रों की ओर प्रवास करने वाले लोगों को पोषक आहार, पर्याप्त रोजगार, सामाजिक सुरक्षा, आवास और पेयजल व स्वच्छता संबंधी सुविधाएं हासिल करने की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। यह न केवल लोगों को आजीविका संबंधित सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए सरकार के सामने चुनौतियां प्रस्तुत करता है, बल्कि खाद्य एवं पोषण सुरक्षा से संबंधित चुनौतियां भी पेश करता है।

लेकिन प्रवासन का परिणाम खाद्य सुरक्षा, टिकाऊ कृषि और ग्रामीण विकास के लिए खुला अवसर भी प्रदान करता है। उदाहरण के लिए, मानव पूंजी और कृषि श्रम में होने वाले नुकसान से फसल उत्पादन और खाद्य उपलब्धता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। ठीक इसी समय शहरी केंद्रों की मांग पूरी करने के लिए पारंपरिक खाद्य मूल्य श्रृंखला भी बदली जा रही हैं। कृषि वस्तुओं के बढ़ते व्यावसायिक प्रवाह, आहार परिवर्तन और शहरी खाद्य पदार्थों की मांग की पूर्ति के लिए व्यावसायिक बाजारों के विकास से खाद्य मूल्य श्रृंखलाएं विकसित हो रही हैं। आधुनिक निवेश वस्तुओं और सूचना एवं जनसंचार प्रौद्योगिकी के बढ़ते प्रयोग तथा ग्रामीण उत्पादकों का समृद्ध शहरी उपभोक्ताओं से जुड़ाव इन बदलते रुझानों के महत्वपूर्ण पहलू हैं।

Solution: Checking rising migration

- प्रवासन के मुद्दे का स्थायी समाधान ग्रामीण-शहरी आर्थिक संबंधों को बढ़ावा देने, खासकर महिलाओं एवं युवाओं के लिए ग्रामीण रोजगार के अवसरों को बढ़ावा देने और उनमें विविधता लाने,सामाजिक सुरक्षा के माध्यम से गरीबों को जोखिम से बेहतर ढंग से निपटने में सक्षम बनाने, ग्रामीण क्षेत्रों में निवेश के लिए धन देने, ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका में सुधार और प्रवासन के संकट को कम करने के लिए व्यावहारिक साधन के रूप में निवेश के लिए धन भेजने पर केंद्रित होना चाहिए।

- टिकाऊ कृषि और ग्रामीण विकास हमें गरीबी, भूख, असमानता, बेरोजगारी, पर्यावरण क्षरण और जलवायु परिवर्तन जैसे प्रवास के मूल कारणों से निपटने के लिए रास्ता सुझाते हैं। इसी बात को ध्यान में रखते हुए खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) अंतरराष्ट्रीय वित्त पोषक संस्थानों और सरकारों के साथ साझेदारी करने में उत्प्रेरक की भूमिका निभा रहा है, और उन्हें कृषि एवं ग्रामीण विकास से संबंधित परियोजना तैयार करने में मदद कर रहा है, जो देश के ग्रामीण क्षेत्रों में महत्वपूर्ण निवेश लाने, प्रौद्योगिकी एवं ज्ञान साझा करने में सहयोग करता है। समय के साथ कृषि क्षेत्र में निरंतर कार्यरत आबादी को भी बदलती प्रौद्योगिकी एवं बाजारों के अनुकूल बनाना होगा। जैसा कि व्यापक रूप से प्रदर्शित किया गया है, प्रौद्योगिकी खेती के संकट को कम कर सकती है और किसानों को बाजार की जरूरतों के अनुकूल बनने में मदद कर सकती है।
- इसलिए यह आवश्यक है कि कृषि कार्य में लगे लोगों की कौशल विशेषज्ञता पर ध्यान केंद्रित करके उनकी आय एवं उत्पादकता बढ़ाई जाए। कृषि संबंधी कौशल विशेषज्ञता के लिए उत्पादन एवं उत्पादन के बाद, दोनों चरणों में कचरे को कम करने और खाद्य सुरक्षा बढ़ाने के लिए भंडारण, पैकेजिंग और परिवहन आदि पर ध्यान केंद्रित किया जा सकता है
- छोटे और सीमांत किसानों की मुश्किलों के साथ एक बड़ी युवा आबादी के पलायन और उनके वंशानुगत पेशे को नहीं अपनाने के कारणों को समझना कठिन नहीं है। जब तक कृषि का संकट कम नहीं होता, स्वास्थ्य व पोषण के साथ-साथ अन्य बुनियादी ढांचे से जुड़ी समस्याओं का समाधान नहीं होता, संकटों और विवेकपूर्ण विकल्प नहीं होने के कारण प्रवासन होता रहेगा

5.शहर की समस्या और ग्रामीण विकास

प्रत्येक व्यक्ति न केवल एक परिवार से अपितु समुदाय से भी संबंध रखता है। समुदाय की दो विशेषता मानी गई है एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र एवं इसके सदस्यों के बीच ' हम की भावना ' गाँव और शहर समुदाय के दो रूप हैं। समुदाय के सदस्य सामान्य रूप से इसमें स्थायी रूप से निवास करते है।समुदाय का भाव अपने पास-पड़ोस से आरम्भ होकर कुछ अंश तक 'हम-भावना' से सामाजिक वर्ग तक फैलता है। किसी भी संस्कृति की पूर्ण अभिव्यक्ति समुदायों के अंतर्गत ही होती है।

गाँवों में रहना मानव समाज की एक चिरपरिचित विशेषता रही है जो मानव सभ्यता के उदय काल से परिलक्षित होती है। ग्रामीण समुदाय एक प्रकार का विस्तृत प्राथमिक समूह है। इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि इसके अधिकांश सदस्य कृषि या पशुपालन के कार्य में लगे रहते हैं और इनका जीवन प्रकृति पर बहुत अधिक निर्भर रहता है। इनके सदस्यों के बीच सामान्यत: घनिष्ठ एवं आत्मीय संबंञ् होता है जो आमने सामने के संपर्कों पर आधारित होता है। इसके सदस्य इसमें स्थायी रूप से निवास करते हैं और अपने सांस्कृतिक मानदंडों पर अपने व्यक्तिगत एवं सामुदायिक जीवन को पूर्णता देने की कोशिश करते हैं। नगरीय समुदाय लोगों का एक खुला संगठन है जिसमें व्यक्ति एक सीमित क्षेत्र में रहते है, जहाँ जनसंख्या-घनत्व अपेक्षाकृत अधिक होता है तथा जीविका का साधन शिल्प, उद्योग या व्यापार होता है। नगरीय जीवन जटिल सामाजिक शक्तियों का प्रतिफल होता है। ये सामाजिक शक्तियाँ जनसंख्या के संवेग, ग्रामीणों के अप्रवास, संचार एवं यातायात के साधनों के विकास, व्यापारिक केंद्रों की अत्यधिक वृध्दि और औद्योगीकरण के प्रभाव से विकसित होती हैं। अमेरिकन मानवशास्त्री राबर्ट रेडफील्ड प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने समुदायों का सुव्यवस्थित अधययन किया। इनका अध्ययन उद्विकासवादी सिध्दांत पर आधारित है। इनकी दृष्टि में अल्प - विकसित समाजों में लघुसमुदाय (गाँव) एवं विकसित समाजों में बृहत् समुदाय (शहर) का विकास होता है। गाँवों की संस्कृति को उन्होंने सरल, अविकसित एवं स्थानीय माना जबकि शहरों की संस्कृति को जटिल - विकसित एवं सार्वभौमिक माना !भारतीय समाज में सिन्धु घाटी की सभ्यता के जमाने से ही गाँवों और शहरों का सहअस्तित्व रहा है। दोनों समुदाय एक - दूसरे के पूरक रहे हैं। दोनों की संस्कृति में विशेष अंतर नहीं

रहा है। जबकि पश्चिम में विकसित आञ्निक समाज में ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों के बीच बहुत अंतर है। पाश्चात्य विचारक गाँव एवं नगर के अंतर पर विशेष बल देते हैं जहाँ नगरों को गाँवों से श्रेष्ठ माना जाता है। पश्चिमी समाजों में गाँव अधिकांशत: आर्थिक रूप से कमजोर, विशेषज्ञता और कौशल में निम्न और मुख्यत: नगरों पर आश्रित थे। दूसरी तरफ अंग्रेजी शासन के पूर्व भारतीय ग्रामीण समाज अपेक्षाकृत शक्तिशाली एवं स्वतंत्र थे एवं ग्रामीण्ा लोग अनेक व्यवसायों एवं कलाओं में दक्ष थे। समकालीन भारत में नगरीय क्षेत्रों का निर्धारण राज्य सरकारों द्वारा होता है और इसके लिए विभिन्न राज्यों ने भिन्न-भिन्न मानदंडों का प्रयोग किया। ये संविधिक शहर कहलाते हैं तथा प्रशासनिक कार्यों के लिए शहरी विकास मंत्रालय से अनुदान प्राप्त करते हैं। इन शहरों का शासन अलग प्रकार की इकाइयाँ जैसे नगरपालिका, अधिसूचित क्षेत्रीय समिति अथवा निगम के द्वारा होता है।

संविधिक शहरों के अलावा जनगणना के आधार पर भी शहरों को परिभाषित किया जाता है। जनगणना अधिकारी संपूर्ण भारतीय क्षेत्र को दो वृहत समूहों में विभाजित करते हैं - ग्रामीण एवं नगरीय केन्द्र!

Government's view regarding Urbanisation

शहरीकरण को लेकर सरकार का नजरिया यह है कि इस पर सियापा करने के बजाय इसे मौके के रूप में देखा जाना चाहिए। उसके मुताबिक शहरों में गरीबी दूर करने की ताकत होती है और हमें इस ताकत को और आगे बढ़ाना चाहिए ताकि आर्थिक समृद्धि का स्वत: प्रसार हो।

सुख-सुविधाओं की मौजूदगी के चलते शहर सदा से मनुष्य के आकर्षण के केंद्र रहे हैं। आज की तारीख में तो ये विकास के इंजन बन चुके हैं। दरअसल, ग्रामीण क्षेत्रों के मुकाबले शहरों में लोगों की ज्यादा आमदनी और वस्तुओं का अधिक उपभोग जहां 'पुल फैक्टर' का काम करता है वहीं गांवों की गरीबी-बेरोजगारी 'पुश फैक्टर' का। ये दोनों मिल कर शहरों में भीड़ बढ़ा रहे हैं। चूंकि शहरों में लोगों की आमदनी ज्यादा होती है इसलिए वस्तुओं और सेवाओं की खपत बढ़ती है जिसका नतीजा अंतत: कंपनियों की अधिक कमाई और देश के जीडीपी की तेज रफ्तार के रूप में सामने आता है। लेकिन शहरीकरण को विकास का पर्याय मानने से पहले शहरी संरचना और और उसकी वैश्विक प्रवृत्ति का संक्षिप्त परिचय अपेक्षित है।

What is urbanization

शहर मानव की सबसे जटिल संरचनाओं में से एक है। यह एक ऐसी यात्रा है जिसका कोई अंत नहीं है। शहर में व्यवस्था और अव्यवस्था साथ-साथ चलते हैं। आमतौर पर शहरों को आर्थिक विकास का इंजन माना जाता है क्योंकि शहरीकरण अनिवार्य रूप से औद्योगीकरण से जुड़ा है। आज दुनिया की आधी आबादी शहरों में रह रही है और अनुमान है कि 2050 तक यह अनुपात बढ़ कर सत्तर फीसद हो जाएगा। उस समय विकसित देशों की चौदह फीसद और विकासशील देशों की मात्र तैंतीस फीसद आबादी शहरी सीमा से बाहर होगी।

शहरीकरण की रफ्तार विकासशील देशों में सबसे तेज है। यहां हर महीने पचास लाख लोग शहरों में आ जाते हैं और विश्व में शहरीकरण में वृद्धि के पंचानबे प्रतिशत हिस्से के लिए जिम्मेदार हैं। शहरीकरण के संदर्भ में एक नई प्रवृत्ति यह उभरी है कि बड़े-बड़े महानगर आपस में मिल कर बृहत महानगर या 'मेगा रीजन' बना रहे हैं। उदाहरण के लिए, भारत में दिल्ली-गाजियाबाद-नोएडा-गुड़गांव-फरीदाबाद, जापान में नगोया-ओसाका-क्योटो और चीन में हांगकांग-शेनजेन-ग्वांझाऊ। ये वृहत महानगर देशों की तुलना में

संपदा की चालक-शक्ति बन कर उभरे हैं। उदाहरण के लिए, चोटी के पच्चीस शहरों के खाते में दुनिया की आधी संपत्ति आती है। भारत और चीन के पांच सबसे बड़े महानगर इन देशों की आधी संपदा रखते हैं।

देखा जाए तो शहरीकरण कई कारकों के सम्मिलित प्रभाव का परिणाम है, जैसे भौगोलिक स्थिति, जनसंख्या वृद्धि, ग्रामीण-शहरी प्रवास, राष्ट्रीय नीतियां, आधारभूत ढांचा, राजनीतिक-सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियां। 1990 के दशक में विकासशील देशों में शहर ढाई प्रतिशत वार्षिक की गति से बढ़ रहे थे, लेकिन इसके बाद उदारीकरण, भूमंडलीकरण ने विकासशील देशों में शहरीकरण को पंख लगा दिए। विशेषज्ञों के मुताबिक विकासशील देशों में शहरीकरण की गति तभी धीमी पड़ेगी जब अफ्रीका व एशिया के ग्रामीण बहुल क्षेत्र शहरी केंद्रों में बदल जाएंगे। 2050 तक विकासशील देशों की शहरी जनसंख्या 5.3 अरब हो जाएगी, जिसमें अकेले एशिया की भागीदारी 63 प्रतिशत या 3.3 अरब की रहेगी। 1.2 अरब लोगों के साथ अफ्रीका दुनिया की एक-चौथाई शहरी जनसंख्या का घर होगा।

इसे एक विरोधाभास ही कहेंगे कि विकासशील देशों के विपरीत विकसित देशों की शहरी जनसंख्या में बढ़ोतरी की रफ्तार थमती जा रही है। उदाहरण के लिए, 2005 में इन देशों की शहरी आबादी नब्बे करोड़ थी, जिसके 2050 तक 1.1 अरब पहुंचने की संभावना है। इन क्षेत्रों के कई शहरों में कम प्राकृतिक वृद्धि और प्रजनन क्षमता में ह्रास के चलते कुल जनसंख्या में कमी आएगी। विकासशीलऔर विकसित देशों के शहरीकरण में एक मूलभूत अंतर यह है कि जहां विकसित देशों में उद्योग व सेवा क्षेत्र के विस्तार और व्यापक सामाजिक सुरक्षा प्रावधानों के कारण शहरी क्षेत्र बेरोजगारी व झुग्गी-झोपड़ियों से मुक्त रहे, वहीं विकासशील देशों में स्थिति इसके विपरीत है।

HISTORY

1.ओडिशा का पाइका विद्रोह

1857 का स्वाधीनता संग्राम जिसे सामान्य तौर पर भारत का पहला स्वतंत्रता संग्राम माना जाता है उससे भी पहले 1817 में ओडिशा में हुए पाइका बिद्रोह ने पूर्वी भारत में कुछ समय के लिये ब्रिटिश राज की जड़े हिला दी थीं।

Region of this

- मूल रूप से पाइका ओडिशा के उन गजपति शाषकों के किसानों का असंगठित सैन्य दल था जो युद्ध के समय राजा को सैन्य सेवायें मुहाये कराते थे और शांतिकाल में खेती करते थे। इन लोगों ने 1817 में बक्शी जगबंधु बिद्याधर के नेतृत्व में ब्रिटिश राज के विरुद्ध बगावत का झण्डा उठा लिया।
- खुर्दा के शासक परंपरागत रूप से जगन्नाथ मंदिर के संरक्षक थे और धरती पर उनके प्रतिनिधि के तौर पर शासन करते थे। वे ओडिशा के लोगों की राजनीतिक और सांस्कृतिक स्वतंत्रता का प्रतीक थे।
- ब्रिटिश राज ने ओडिशा के उत्तर में स्थित बंगाल प्रांत और दक्षिण में स्थित मद्रास प्रांत पर अधिकार करने के बाद अंग्रेजों ने 1803 में ओडिशा को भी अपने अधिकार में कर लिया था। उस समय ओडिशा के गजपति राजा मुकुंददेव द्वितीय अवयस्क थे और उनके संरक्षक जय राजगुरु द्वारा किये गये शुरुआती प्रतिरोध का क्रूरता पूर्वक दमन किया गया और जयगुरु के शरीर के जिंदा रहते हुये ही टुकड़े कर दिये गये। कुछ वर्षों के बाद गजपति राजाओं के असंगठित सैन्य दल के वंशानुगत मुखिया बक्शी जगबंधु के नेतृत्व में पाइका विद्रोहियों ने आदिवासियों और समाज के अन्य वर्गों का सहयोग लेकर बगावत कर दी।
- पाइका विद्रोह 1817 में आरंभ हुआ और बहुत ही तेजी से फैल गया। हालांकि ब्रिटिश राज के विरुद्ध विद्रोह में पाइका लोगों ने अहम भूमिका निभायी थी लेकिन किसी भी मायने में यह विद्रोह एक वर्ग विशेष के लोगों के छोटे समूह का विद्रोह भर नहीं था।
- घुमसुर जो कि वर्तमान में गंजम और कंधमाल जिले का हिस्सा है वहां के आदिवासियों और अन्य वर्गों ने इस विद्रोह में सक्रिय भूमिका निभायी। वास्तव में पाइका विद्रोह के विस्तार का सही अवसर तब आया जब घुमसुर के 400
- आदिवासियों ने ब्रिटिश राज के खिलाफ बगावत करते हुये खुर्दा में प्रवेश किया। खुर्दा, जहां से अंग्रेज भाग गये थे, वहां की तरफ कूच करते हुये पाइका विद्रोहियों ने ब्रिटिश राज के प्रतीकों पर हमला करते हुये पुलिस थानों, प्रशासकीय कार्यालयों एवं राजकोष में आग लगा दी। पाइका विद्रोहियों को कनिका, कुजंग, नयागढ़ और घुमसुर के राजाओं, जमींदारों, ग्राम प्रधानों और आम किसानों का समर्थन प्राप्त था। यह विद्रोह बहुत तेजी से प्रांत के अन्य इलाकों जैसे पुर्ल, पीपली और कटक में फैल गया। विद्रोह से पहले तो अंग्रेज चकित रह गये लेकिन बाद में उन्होंने आधिपत्य बनाये रखने की कोशिश लेकिन उन्हें पाइका विद्रोहियों के कड़े प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। बाद में हुई कई लड़ाइयों में विद्रोहियों को विजय मिली लेकिन तीन महीनों के अंदर ही अंग्रेज अंतत: उन्हें पराजित करने में सफल रहे।

इसके बाद दमन का व्यापक दौर चला जिसमें कइयों को जेल में डाला गया और कइयों को अपनी जान गंवानी पड़ी। बहुत बड़ी संख्या में लोगों को अत्याचारों का सामना करना पड़ा। कई विद्रोहियों ने 1819 तक गुरिल्ला युद्ध लड़ा लेकिन अंत में उन्हें पकड़ कर मार दिया गया। बक्शी जगबंधु को अंतत: 1825 में गिरफ्तार कर लिया गया और कैद में रहते हुये ही 1829 में उनकी मृत्यु हो गयी। हालांकि पाइका विद्रोह को ओडिशा में बहुत उच्च दर्जा प्राप्त है और बच्चे अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ाई में वीरता की कहानियां पढ़ते हुये बड़े होते हैं लेकिन दुर्भाग्य से इस विद्रोह को राष्ट्रीय स्तर पर वैसा महत्व नहीं मिला जैसा कि मिलना चाहिये

था। ऐसी महत्वपूर्ण घटना को इतना कम महत्व दिये जाने के पीछे कई कारण हो सकते हैं लेकिन यह संतोष की बात है कि भारत सरकार ने इस विद्रोह को समुचित पहचान देने के लिये इस घटना की 200वीं वर्षगांठ को उचित रूप से मनाने का निर्णय लिया है

2.आंदोलन जिसमें हर कोई नेता था : अगस्त क्रांति

#Hindustan

हमारे राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम की सबसे बड़ी लड़ाई थी अगस्त क्रांति (Quit India) और इस आंदोलन की विशेषताएं इसे आजादी की लड़ाई के दूसरे तमाम आंदोलनों से अलग करती हैं। अन्य आंदोलनों से इसके अलग कहने का मतलब किसी आंदोलन के अच्छे-बुरे की बात नहीं है, बल्कि इसकी अहमियत को बताना मकसद है।

जैसे दांडी यात्रा का अपना एक अलग चरित्र था। असहयोग आंदोलन की अपनी विशेषताएं थीं, इसी तरह 'भारत छोड़ो आंदोलन' की भी थीं।मगर यह आंदोलन इस मायने में सबसे खास था कि:

- इसे देश भर के अवाम का स्वत:स्फूर्त समर्थन मिला।
- जब 8 अगस्त को कांग्रेस ने अंग्रेजों को यह कहने के लिए प्रस्ताव पारित किया कि आप भारत से जाएं, और गांधी जी ने 'करो या मरो' का आह्वान किया, तो असल में मकसद ठीक उसी समय से वह आंदोलन शुरू करना नहीं था, बल्कि इसके जरिये यह संदेश दिया जा रहा था कि हमें यह काम करना है।
- उस समय तो गांधी जी ने कहा था कि आंदोलन को विधिवत शुरू करने में दो-तीन हफ्ते लगेंगे, क्योंकि मैं पहले वायसराय से बात करूंगा, जैसा कि मैं हमेशा कोई आंदोलन शुरू करने से पहले करता आया हूं।
- गांधी जी हमेशा ब्रिटिश हुकूमत को यह बताते थे कि हम यह कार्यक्रम करने जा रहे हैं और उस पर अंग्रेजों की सकारात्मक प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा भी करते थे।
- 'भारत छोड़ो आंदोलन' के प्रस्ताव पारित करने के वक्त गांधी की यही भावना थी। परंतु 8 अगस्त की रात और 9 तारीख की सुबह स्वतंत्रता संग्राम के राष्ट्रीय नेतृत्व को बड़े पैमाने पर गिरफ्तार कर लिया गया।
- मुंबई में गांधीजी और उनके सहयोगियों को हिरासत में ले लिया गया, तो राज्य स्तर पर भी कांग्रेस के शीर्ष नेताओं को उठा लिया गया। जाहिर है, यह अचानक उठाया गया कदम नहीं था। ब्रिटिश सरकार ने पहले से ही अपनी रणनीति बना रखी थी।
- देश के लोग इतने बड़े पैमाने पर अपने नेताओं की गिरफ्तारी से भौंचक रह गए। इस पर उनकी जबर्दस्त प्रतिक्रिया सामने आई और 9 अगस्त को ही देश के कई इलाकों में बड़ी-बड़ी रैलियां हुईं, खासकर शहरों में लोग हजारों की तादाद में सड़कों पर उमड़ आए।
- पटना, दिल्ली, बंबई (अब मुंबई) में खास तौर से छात्र और नौजवान आंदोलन करने लगे। 9 अगस्त को ही कई जगहों पर गोलियां भी चलीं, जिसमें अनेक लोग मारे गए।
- यह आंदोलन किसी के आह्वान पर नहीं शुरू हुआ था, क्योंकि कांग्रेस और गांधी जी ने अभी तो यह तय ही नहीं किया था कि किस दिन से आंदोलन का आह्वान किया जाए। उन्होंने उस वक्त सिर्फ संकल्प लिया था कि हमें आंदोलन करना है। साथ ही यह भी संकल्प लिया था कि अब पीछे नहीं हटना है, यानी 'करो या मरो।'
- उस समय तक देश की आजादी की आवाज भारत के कोने-कोने तक पहुंच गई थी और स्वतंत्रता संग्राम की पहुंच समाज के सभी तबकों तक बन चुकी थी। लोगों में यह भावना बलवती हो उठी थी कि

अंग्रेजों को अब यह देश छोड़ना ही होगा और इसके लिए वे कोई लंबा इंतजार करने के मूड में भी नहीं थे। एक तरह से शीघ्र आजादी की भावना गहरी हो चली थी।

- इस आंदोलन ने दिखाया कि आजादी की राष्ट्रीय भावना अब किस चरम पर है।

Leaderless movement

आम तौर पर किसी भी आंदोलन की रूपरेखा बनती है। नेतृत्व अपने कैडर तैयार करता है कि एक खास तिथि से सत्याग्रह शुरू होगा और अमुक-अमुक लोग अपनी क्रमवार गिरफ्तारियां देंगे। फिर हम स्कूल-कॉलेजों का बहिष्कार करेंगे या विदेशी वस्त्रों का त्याग करेंगे, लेकिन अगस्त क्रांति में ऐसा कोई कार्यक्रम नहीं बनाया गया था। यकीनन कांग्रेस के आंदोलन की तैयारी चल रही थी, लेकिन उसके नेताओं की अचानक गिरफ्तारी ने इसे तत्काल भड़का दिया। कांग्रेस की तैयारी का अंदाज इस बात से लगता है कि उसे मालूम था कि विश्व युद्ध के दौरान वह अंग्रेजों से मोर्चा लेने जा रही है और इस पर ब्रिटिश हुकूमत की प्रतिक्रिया काफी सख्त होगी। इसीलिए लोगों को क्या निर्देश देने हैं, यह भी सोच लिया गया था। गांधी जी ने अपने भाषण में कहा भी था कि '**इच मैन विल बी ओन लीडर**'यानी हर सेनानी अपना नेता खुद होगा। वह अपनी बुद्धि और विवेक से काम करेगा। चूंकि उसे अच्छी तरह से प्रशिक्षित किया जा चुका है कि किस स्थिति में क्या करना चाहिए, इसलिए कोई भी कार्यकर्ता नेतृत्व के निर्देश का इंतजार नहीं करेगा। मैं मानती हूं कि यह इस आंदोलन की खास विशेषता थी।

- पहले के आंदोलन में नेतृत्व को काफी वक्त मिल जाता था। अंग्रेज उन्हें तुरंत उठाकर जेल में नहीं डाल देते थे।
- नमक सत्याग्रह में ही गांधी जी कितने दिनों तक पैदल चले, 6 अप्रैल को दांडी में नमक बनाकर कानून तोड़ने के भी काफी दिनों के बाद उनको हिरासत में लिया गया।
- इसी तरह जवाहरलाल नेहरू और सरदार पटेल को भी काफी समय मिला करता था, जिससे वे आंदोलन की दशा-दिशा तय कर पाते थे। मगर अगस्त क्रांति ने हर एक सेनानी को अपना नेता बना दिया था।

इस आंदोलन में लोगों ने ब्रिटिश सत्ता के प्रतीकों जैसे थानों, स्टेशनों पर कब्जा कर लिया था, बड़े पैमाने पर ग्रामीण नौजवानों ने इसे गांव-गांव में पहुंचा दिया। जाहिर है, 1857 के बाद सबसे ज्यादा दमन इसी आंदोलन का हुआ। कांग्रेस का अपना आकलन था कि 10 हजार से ज्यादा भारतीय इसमें शहीद हुए थे। इन शहादतों ने आजादी की निर्णायक पटकथा लिख दी

3. रूसी साम्यवादी क्रांति के १०० साल पूरे; जानते हैं इस क्रांति के वर्तमान प्रभाव

आज पूरी दुनिया में रूस की साम्यवादी क्रांति के 100 साल पूरे होने पर बहस, बातचीत हो रही है। ऐसे में बीते सौ साल में रूस में जो बदलाव आया है, उसे एक घटना से समझा जा सकता है। इस वक्त रूस में न्यू रशियन रेवेल्यूशन 2017 की मांग जोर पकड़ रही है। इसके बावजूद 20वीं सदी के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवन पर जिन चंद घटनाओं ने सबसे ज्यादा असर डाला है, उनमें दोनों विश्वयुद्ध के बाद रूस की क्रांति सबसे महत्वपूर्ण है।

- यह क्रांति ऐसे वक्त में घटी जब पूरी दुनिया पहले विश्व युद्ध से जूझ रही थी। क्रांति के बाद रूस पहले विश्व युद्ध से अलग हो गया था। अगर रूसी क्रांति न होती, तो जाहिर है दुनिया की मौजूदा शक्ल भी ऐसी न होती, जो हम अभी देख रहे है, क्योंकि बीते 100 सालों में दुनिया के हर क्षेत्र पर इसका व्यापक असर रहा है।

=>आर्थिक: बदला पूंजीवाद का स्वरूप

- क्रांति ने रूस की आर्थिक संरचना पूरी तरह बदल दी थी। व्यक्तिगत संपत्ति के खात्मे के साथ उद्योगों पर कामगारों का नियंत्रण स्थापित हुआ। इसके बाद पूरी दुनिया में पूंजीवादी समाज का स्वरूप बदला और दुनियाभर में आर्थिक सुधार लागू हुए।
- कामकाजी समाज की जरूरतों के मद्देनजर केंद्रीयकृत अर्थव्यवस्था की शुरुआत हुई। अन्य देशों और सत्ताओं ने अपने देश में क्रांति स्थगित करने के लिए नागरिकों को ज्यादा आर्थिक स्वतंत्रता मुहैया कराई और लाभ में कामगारों की हिस्सेदारी भी बढ़ी

=>सामाजिक: गैरबराबरी के खिलाफ बना माहौल

- रूसी क्रांति के बाद पूरी दुनिया में सामाजिक गैरबराबरी के खिलाफ माहौल तैयार हुआ। ब्रिटेन और स्पेन के उपनिवेशों में लोगों के बीच रूसी क्रांति ने नई चेतना जगाई और इन देशों में किसी भी कीमत पर आजादी पाने की चाह ने व्यापक रूप लिया।
- नतीजतन बाद के दशकों में कई देश साम्राज्यवादी देशों की गुलामी से आजाद हुए। नि:शुल्क चिकित्सा सेवा, नि:शुल्क और समान सर्वशिक्षा जैसे सामाजिक बदलावों पर दुनिया भर में बहस हुई और कई देशों ने इन्हें लागू भी किया।

=>महिला: बढ़ी राजनीतिक, आर्थिक हिस्सेदारी: रूसी क्रांति में महिलाओं की बड़ी भूमिका थी और पूरी 20 सदी में महिलाओं की राजनीतिक भूमिका पर इसका असर रहा है। रूस में सोवियत शासन के दौरान स्त्रियों को आर्थिक स्वतंत्रता मिली और वे आत्मनिर्भरता हासिल करने में सफल रहीं। अक्टूबर 1918 में विवाह संहिता, परिवार, अभिभावकत्व जैसे कानूनों से यूरोपीय, अफ्रीकी और एशियाई समाजों पर व्यापक असर पड़ा।

=>राजनीति: शासन के विकल्पों पर चर्चा: किताबों तक तक सीमित साम्यवादी शासन का जमीनी प्रयोग पहली बार सामने आया। इसके बाद दुनिया के करीब आधे हिस्से में कम्यूनिस्ट शासन स्थापित हुआ। क्रांति के बाद कम्यूनिस्ट इंटरनेशन की स्थापना हुई। हालांकि कई देश अपनी क्रांतियां बचा नहीं पाए, लेकिन विचार के तौर पर समर्थन-आलोचना के साथ पूरी 20 सदी में साम्यवादी शासन की चर्चा रही। असफल होने के कारणों से स्वरूप बदलने के राजनीतिक उदाहरण सामने आते रहे।

=>शीत युद्ध: दो धुव्रीय दुनिया में हथियारों की होड़ :यूरोपीय राज्य में साम्यवाद का क्रांति के जरिये आना यूरोपीय और अमरीकी देशों को नागवार गुजरा था। दूसरे विश्व युद्ध में रूस मित्र देशों की और इस दौरान अमरीका और सोवियत संघ के मध्य मतभेद उभरे। इसके बाद पूरी दुनिया में शीत युद्ध का माहौल बना। इस समय पूरी दुनिया दो बड़ी ताकतों के साथ धड़ों में बंट गई। पूंजीवादी खेमा अमरीका और साम्यवादी खेमा सोवियत संघ के साथ था।

- इसी दौरान "परमाणु और अन्य हथियारों की होड़ भी बढ़ी। स्वेज संकट, क्यूबा संकट, अफगानिस्तान की समस्या इसके उदाहरण थे.

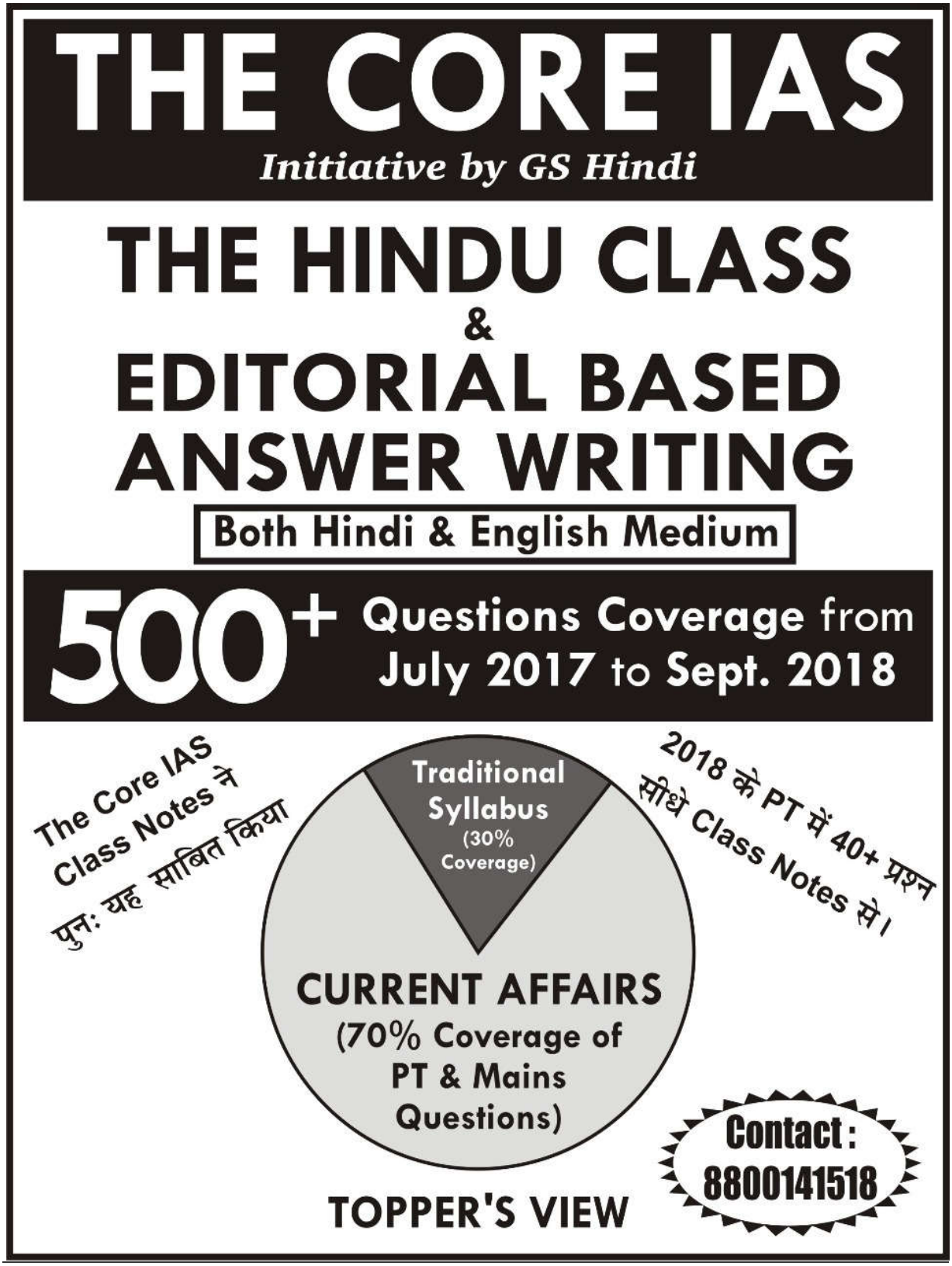
THE CORE IAS
Initiative by GS Hindi
THE HINDU CLASS
&
EDITORIAL BASED
ANSWER WRITING
Both Hindi & English Medium
500+ Questions Coverage from
July 2017 to Sept. 2018
The Core IAS
Class Notes ने
पुन: यह साबित किया
Traditional
Syllabus
(30%
Coverage)
2018 के PT में 40+ प्रश्न
सीधे Class Notes से।
CURRENT AFFAIRS
(70% Coverage of
PT & Mains
Questions)
TOPPER'S VIEW
Contact :
8800141518

THE CORE IAS

Initiative by GS Hindi

WEEKEND CURRENT AFFAIRS

Batch - Saturday & Sunday

From 16-17 June (8:00 am - 11:30 am)

FAST TRACK MAINS ANSWER WRITING PROGRAMME

Daily 10 Editorial Based Question-Answer

From 18 June (Morning & Evening Batch)

FOUNDATION MAINS ANSWER WRITING PROGRAMME

for Mains 2019

From 18 June - 2 Days / Week (Morning & Evening Batch)

Test Series of G.S & Optional(Geog, History, Hindi,Pol.Sc)

Other Module :

• Environment & Ecology • Society & Social Justice • History • Geog. • Essay

YouTube The Core IAS

Add. : Chamber No. 3, IInd Floor, Batra Complex, Mukherjee Nagar, Delhi-110009

8800141518

9540297983

MISCELLANEOUS

1.आज अधिक प्रासंगिक हैं गांधी

दो से छह अक्टूबर के मध्य भारत में प्रतिवर्ष वन्य-जीव सप्ताह मनाया जाता है। दो अक्टूबर की यह तिथि स्वत: वन्यजीव सप्ताह को एक अनन्य प्रतीकात्मक महत्व दे देती है। गांधी के पर्यावरण औरपारिस्थितिकी संबंधी विचारों को उनके राजनीतिक दर्शन के सापेक्ष अधिक महत्व नहीं दिया गया है। अहिंसा और सत्याग्रह के दर्शन को असंदिग्ध रूप से उनके राजनीतिक दर्शन में धुरी का स्थान प्राप्तहै। गांधी जी के अहिंसा के दर्शन को प्राय: उस बौद्धिक नजरिये से अधिक व्याख्यायित किया जाता है जो उनके विचारों को उपनिवेशवाद और बीसवीं सदी के उग्र साम्राज्यवाद के बरक्स रखकर देखताहै, लेकिन स्वयं गांधी जी के लिए उनकी अहिंसा उस भारतीय परंपरा का अविच्छिन्न अंग थी जो पश्चिमी दर्शन के विपरीत जीवन को एक समग्रता-बोध में देखती है। उनकी अहिंसा का संदेश केवल'मनुष्य से मनुष्य' के लिए ही नहीं था। 19 जनवरी, 1937 के 'हरिजन' के अंक में उन्होंने लिखा कि 'मेरा यह अटल विश्वास है कि ईश्वर के बनाए गए हर प्राणी को यहां रहने का उतना ही अधिकारहै जितना कि मनुष्य को। और हमें मनुष्य के रूप में अपने और शेष जीव-जगत के बीच और अधिक दया और करुणा का संबंध महसूस करना चाहिए।

छह अक्टूबर, 1921 को 'यंग इंडिया'के अंक में गांधी जी ने लिखा कि 'गाय का मेरे लिए अर्थ है परमात्मा की उस सत्ता से एकाकार हो जाना जो मनुष्य से परे भी व्याप्त है।' गांधी जी के लिए पर्यावरण की संगति में जीने का ही परिणामउनका यह सिद्धांत था कि मनुष्य उसे कम से कम आहत किए हुए जिए। गांधी जी का दर्शन पश्चिमी ज्ञानोदय की उस बुनियादी विचारधारा के उलट था जो डेकार्ट के दर्शन से प्रभावित होकर जीवन और विचार, दोनों को द्वैत में देखने लगी थी। जहां जीवन की समस्याओं कासमाधान फ्रेडरिक नीत्शे जैसे विचारकों की नजर में केवल 'शक्ति' के जरिये ही हो सकता था। जिसका दुष्परिणाम पूरा यूरोप और शेष विश्व पूरी बीसवीं शताब्दी में युद्ध और प्रकृति के विनाश में भोगतारहा। 1924 में गांधी जी ने 'यंग इंडिया' में लिखा कि 'मैं उस अद्वैत में यकीन रखता हूं जो मनुष्य और उससे भी परे समस्त जीव जगत को एक मानती है। लिहाजा मेरे लिए किसी एक मनुष्य काआध्यत्मिक परिष्कार समूचे जगत का परिष्कार है, और किसी एक का पतन पूरे जगत का पतन'। 1972 में थर्ड वर्ल्ड फ्यूचर कांग्रेस में नार्वे के दार्शनिक अर्ने नेस ने पर्यावरण की उपयोगितावादीविचारधारा के विरुद्ध जैवमंडलीय समानता का सिद्धांत देकर एक नए दर्शन 'इकोसफी' को प्रस्तावित किया। खुद अर्ने नेस ने स्वीकार किया था कि अपनी इस अवधारणा को निर्मित करने में वहमहात्मा गांधी के अहिंसा और प्रकृति के बारे में उनके विचारों से प्रेरित थे। दार्शनिक अर्ने नेस के इस सिद्धांत के अनुसार केवल मनुष्य को ही नहीं, बल्कि अन्य जीव-जगत को भी जीवित रहने औरफलने-फूलने का सार्वभौमिक अधिकार मिला हुआ है जिसे किसी भी तरह सीमित नहीं किया जा सकता। नेस भी गांधी जी की तरह मानते थे कि जीवन जीने के ऊंचे और महंगे तरीकों ने प्रकृति पर बोझडाला है। खुशहाल समाज के लिए ऊंचा जीडीपी ही पर्याप्त नहीं है। विकास की अपनी सीमा है।

गांधी जी के लिए सभी प्राणियों का जैविक अस्तित्व उनकी अहिंसा का बुनियादी आधार था। यह विडंबना ही है कि एक संवेदनशील समाज के रूप में हम धीरे-धीरे स्वयं इन मूल्यों से कटते गए। पिछलीएक-डेढ़ सदी से हम प्राणी जगत पर इस कदर हिंसक हुए कि पारिस्थितिकी और उसमें आवासित कई जीव-जंतुओं का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया। विकास की अंध-गति में हम पर्यावरणीय मूल्यों कोभूल गए। प्रकृति हमारे लिए अंधाधुंध दोहन का क्षेत्र हो गई। हम भी पश्चिम की तरह प्रकृति और उसके नाना जीव-जगत को अपने ऐशो-आराम और सुविधाजनक जीवन-भोग में रास्ते का ऐसा कांटासमझने लगे जिसे जड़ मूल से उखाड़ फेंकना मानो अपरिहार्य हो। वन्य-जीव की विविधता में अफ्रीका महाद्वीप के कुछ देशों के बाद

भारत ही वह देश है जहां हजारों वर्षों से जैव-समृद्धि फलती-फूलतीरही। उच्च हिमाच्छादित इलाकों में हिम तेंदुआ, जंगली बकरी और कई तरह के हिरन निरापद जीते रहे। गंगा के स्वच्छ जल में डॉल्फिन अठखेलियां करती रहीं। शिवालिक के निम्न पर्वतीय इलाकों सेलेकर राजस्थान के उच्च तापमान वाले क्षेत्रों और सुंदरवन की दलदली भूमि में बाघ विचरते रहे हैं। बारूद की खोज होने तक मनुष्य और वन्य-जीवों में संघर्ष लगभग बराबर का था। बारूद और लंबीदूरी तक मारक क्षमता वाली राइफलों के आविष्कार ने अचानक मनुष्य को एक लालची और शौकीन शिकारी में बदल दिया। वर्ष 1900 तक एक अनुमान के मुताबिक भारत में बाघों की संख्या एकलाख के आसपास थी। 1940 तक यह आबादी महज कुछ हजारों में रह गई।
1905 तक पंजाब के किसी भी जिले से गुजरने पर हजारों की संख्या में काले हिरणों के झुंड के झुंड दिखते थे। जो गैंडे आज काजीरंगा और उत्तर-पूर्व के कुछ जंगलों में अपने अस्तित्व की आखिरी लड़ाईलड़ रहे हैं, वह पंजाब तक पाए जाते थे। पाड़ा, सांभर और दलदली हिरणों से ये इलाके गुलजार थे। तुजुक-के बाबरी, जो बाबर की आत्म-कथा है, से पता चलता है कि पेशावर से पंजाब के बीच गैंडों कीभरमार थी। अकबर के पास तीन हजार से अधिक प्रशिक्षित चीते थे। यह भी क्या विडंबना है कि भारत में आखिरी जंगली चीता उसी वर्ष 1947 में मार दिया गया जिस वर्ष भारत आजाद हुआ। एशियाईशेर आज सिमटकर गिरि के जंगलों तक रह गए हैं। लंबी थूथन वाले घड़ियाल कुछ 200 ही बचे हैं। जाहिर है इन्हें यदि संरक्षित नहीं किया गया तो संभव है कि हमारी अगली पीढ़ियां उन्हें किताबों केजरिये ही जानें।

आज हमारे घरों के आंगन में गौरैय्या आना छोड़ चुकी है। छोटे-छोटे कस्बों तक में दिख जाने वाले गिद्ध, जो हमें स्वयं प्रकृति द्वारा दिए गए स्वच्छता के सिपाही थे, अब नहीं दिखते। बागों से तितलियों केझुंड नदारद हैं। जाहिर है हमने इन सबके बिना रहना सीख लिया है। हम अपने पूर्वजों के उस दर्शन से बहुत आगे निकल आए हैं जिनके लिए प्रकृति और उसके सभी जीवन-रूपों का समादर उनकेजीवन का अभिन्न मूल्य था। जिन्होंने ऋग्वेद में वनों की देवी अरण्यानि के लिए सूक्त रचे और उससे सह-अस्तित्व का करार किया था और यह घोषणा की थी कि अरण्यानि किसी से हिंसा नहीं करती,दूसरा भी कोई उस पर हिंसा नहीं करता। जीवों की माता ऐसी अरण्यानि की मैं स्तुति करता हूं। यही गांधी जी का समग्र अहिंसा का विचार था और जिसे पश्चिम में बहुत बाद में अर्ने नेस जैसे दार्शनिकों नेएक नए पर्यावरणीय मूल्य के रूप में प्रस्तावित किया।

2. स्वच्छ भारत एक बड़ी चुनौती

रांची नगर निगम के 'हल्ला बोल, लुंगी खोल' अभियान को पिछले हफ्ते राष्ट्रीय मीडिया में जगह मिली. खुले में शौच जानेवालों की लुंगी उतरवाने के लिए सुबह-सुबह नगर निगम की टीमें तैनात हैं. 'हल्लाबोल, घर से दूर छोड़' भी इसी का हिस्सा है. खुले में शौच के लिए जानेवालों को पकड़ो और दूर ले जाकर छोड़ दो. मकसद है कि लोग शर्मिंदा हों. अपने घर में शौचालय बनवायें और उसका इस्तेमालकरें|

Other News

- पहले उत्तर प्रदेश के बिजनौर से खबर थी कि जिलाधिकारी के आदेश से वहां खुले में शौच कर रहे लोगों पर टॉर्च चमकाये गये और सीटियां बजायी गयीं. इसके लिए पुरुषों और महिलाओं की टीमेंसुबह-सुबह टॉर्च और सीटी लेकर तैनात रहती हैं.
- • ताजा खबर मध्य प्रदेश के बैतूल जिले की है. वहां अमला विकास खंड के सात गांवों में बिना शौचालय वाले घरों पर 250 रुपये प्रति व्यक्ति, प्रतिदिन के हिसाब से महीनेभर का अर्थदंड लगाया गया है.एक

परिवार पर तो 75 हजार रुपये का दंड लगा है. इन परिवारों के मुखिया तनाव में हैं. उनका कहना है कि भले ही जेल जाना पड़े, इतना जुर्माना कहां से दें. पैसे होते तो शौचालय नहीं बनवा लेते?

Scheme Target

देश को स्वच्छ बनाने के प्रधानमंत्री के संकल्प की समय-सीमा ज्यों-ज्यों समीप आती जा रही है, राज्यों और उनके प्रशासन पर यह लक्ष्य हासिल करने का दबाव बढ़ता जा रहा है. 2014 में प्रधानमंत्रीमोदी ने आह्वान किया था कि 2019 तक पूरे देश को साफ-सुथरा बनाना है. खुद उन्होंने दिल्ली की एक सड़क पर झाड़ू लगाकर स्वच्छ भारत मिशन की शुरुआत की थी. उनके मंत्रिमंडलीय सहयोगियोंऔर भाजपाई राज्यों के मुख्यमंत्रियों एवं मंत्रियों ने भी झाड़ू पकड़कर स्वच्छता का संकल्प लिया था.

Efforts Before SBA

इसमें दो राय नहीं कि स्वच्छ भारत मिशन अत्यंत आवश्यक और पवित्र संकल्प है. गांवों से लेकर शहरों तक भीषण गंदगी फैली है. पीने का साफ पानी मयस्सर होना तो बहुत दूर की बात है, कूड़े-कचरे,मलबे और मानव उच्छिष्ठ के कारण गांवों से लेकर शहरों-महानगरों तक की आबादी घातक रोगों की चपेट में आती रहती है. बिहार का कालाजार हो या पूर्वी उत्तर-प्रदेश का जापानी इंसेफ्लाइटिस,जिनसे हर साल सैकड़ों-हजारों बच्चों की मौत होती है, इन बीमारियों के होने और फैलने का प्रमुख कारण गंदगी है. पूर्व की सरकारों और यूपीए शासन में निर्मल भारत योजना चलायी जरूर गयी, लेकिनकिसी प्रधानमंत्री ने इस अभियान को ऐसी प्राथमिकता और इतना ध्यान नहीं दिया. सरकारी आंकड़ों पर विश्वास करें, तो देश का सफाई-प्रसार (सैनिटेशन कवरेज) जो 2012-13 में 38.64 फीसदी था, वह 2016-17 में 60.53 फीसदी है. 2014 से अब तक करीब तीन करोड़ 88 लाखशौचालय बनवाये गये हैं.

Success of SBA

- एक लाख 80 हजार गांव, 130 जिले और तीन राज्य- सिक्किम, हिमाचल और केरल- खुले में शौच मुक्त घोषित कर दिये गये हैं.
- दावा है कि इस वर्ष के अंत तक गुजरात, हरियाणा, पंजाब, मिजोरम और उत्तराखंड भी इस श्रेणी में आ जायेंगे.

Ground Reality

जमीनी हकीकत बहुत फर्क है. देश में शायद ही ऐसा कोई नगर निगम, नगर पालिका या पंचायत हो, जिसके पास अपने क्षेत्र में रोजाना निकलनेवाले कचरे को उठाने और कायदे से उसे निपटाने कीक्षमता हो. जो कचरा उठाया जाता है, किसी बाहरी इलाके में उसका पहाड़ बनता जाता है. सिर पर मैला ढोने की कुप्रथा कायम है. खुले में शौच की मजबूरी का नारकीय उदाहरण तो रोज सुबह ट्रेन कीपटरियों, खेतों-मैदानों में दिखाई ही देता है.

Need to equip Municipality

- प्रधानमंत्री और सारे मंत्री चाहे जितना झाड़ उठा लें, कचरा प्रबंधन और नगर निगमों-
  नगर पालिकाओं की क्षमता बढ़ाये बिना शहर और कस्बे साफ नहीं हो सकते. नागरिकों को सफाई अप नेव्यवहार का हिस्सा बनानी होगी. इन मोर्चों पर क्या हो रहा है?
- स्वच्छ भारत मिशन का सारा जोर खुले में शौच को बंद करना है. जिलाधिकारियों पर अपने जिले को इ ससे मुक्त घोषित करने का दबाव है. उसी दबाव के चलते कहीं लुंगी खुलवाई जा रही है, कहींटॉर्च चम काया जा रहा है और कहीं भारी जुर्माना थोपा जा रहा है.

Will forceful Method Work

क्या ऐसे अपमान और आतंक से लोगों को समझाया जा सकता है? स्वच्छ भारत मिशन की दिशा-निर्देशिका कहती है कि गांव-गांव स्वच्छता-दूत तैनात किये जायें, जो लोगों को समझायें कि खुले में शौचके क्या-क्या नुकसान हैं. लोगों को मोटीवेट करना है, अपमानित नहीं. कहां हैं वे स्वच्छता दूत?

- बहुत सारे लोग शौचालय बनवा लेने के बावजूद खुले में जाना पसंद करते हैं. पुरानी आदत के अलावा ऐसा शौचालयों की दोषपूर्ण बनावट के कारण भी है.
- • सरकारी दबाव और मदद से जो शौचालय बनवाये गये हैं, अधिसंख्य में पानी की आपूर्ति नहीं है. 'सोकपिट' वाले शौचालयों में पानी कम इस्तेमाल करने की बाध्यता भी है. नतीजतन दड़बेनुमा येशौचालय गंधाते रहते हैं.
- 'कपार्ट' के सोशल ऑडिटर की हैसियत से मैंने देखा है कि लोग ऐसे शौचालयों का प्रयोग करना ही नहीं चाहते. बल्कि, उनमें उपले, चारा और दूसरे सामान रखने लगते हैं.

Other Challenge of SBA

- एक बड़ी आबादी शौचालय नहीं बनवा सकती, क्योंकि उसके लिए दो जून की रोटी जुटाना ही मुश्किल है. गंगा के तटवर्ती गांवों को खुले में शौच-मुक्त कर लेने के सरकारी दावे की पड़ताल में 'इंडियन एक्सप्रेस' ने हाल ही में पाया कि लगभग सभी गांवों में ऐसे अत्यंत गरीब लोग, जिनमें दलितों की संख्या सबसे ज्यादा है, अब भी खुले में शौच जा रहे हैं. वे शौचालय बनवा पाने की हैसियत ही में नहीं हैं. सरकारी सहायता तब मिलती है, जब शौचालय बनवाकर उसके सामने फोटो खिंचवायी जाये.
- शहरों-महानगरों में एक बड़ी आबादी झुग्गी-झोपड़ियों में रहती है. मजदूरी करनेवाले एक बोरे में अपनी गृहस्थी पेड़ों-खंभों में बांधकर फुटपाथ या खुले बरामदों में जीते हैं.
- इनके लिए सामुदायिक शौचालय बनवाने के निर्देश हैं. अगर वे कहीं बने भी हों, तो उनमें रख-रखाव-सफाई के लिए शुल्क लेने की व्यवस्था है, जो इस आबादी को बहुत महंगा और अनावश्यक लगता है.

खुले में शौच से मुक्ति का अभियान सचमुच बहुत बड़ी चुनौती है. इसका गहरा रिश्ता अशिक्षा और गरीबी से है. सार्थक शिक्षा दिये और गरीबी दूर किये बिना सजा की तरह इसे लागू करना सरकारीलक्ष्य तो पूरा कर देगा, लेकिन सफलता की गारंटी नहीं दे सकता